ॐ

भक्ति

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

सम्पादकः—कृष्णानन्द

श्रावण सम्वत् १९८५ ।

वार्षिक चन्दा १)

एक प्रतिका ।)

भक्ति के नियम।

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना गो रक्षण और उस के लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना। वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना। सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना। राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. वार्षिक चन्दा सर्वसाधारण से २) होगा।

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्रके संरक्षक और ५) देनेवाले सहायक होंगे।

५. अश्लील और अपरिचित विज्ञापन नहीं लिए जावेंगे।

६. लेखों को प्रकाशित करना और और घटाना व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और विज्ञापन व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्तिके नामसे होना चाहिए।

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति नहीं भेजी जायगी।

९. पत्रोत्तर का लिये नवाबी, कार्ड भेजना चाहिये।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ
१. मंगला चरण	३२९
२. महात्माओं के वाक्य	३३२
३. श्रीकृष्ण चरित्र [लेखक भूमानन्द ब्रह्मचारी]	३३३
४. गर्भोपनिषद्	३३७
५. श्रद्धा [ले० श्रीमती सूरज देवी]	३३९
६. मानव धर्म सार	३४५
७. मूल्य श्लोक गोभक्तों से निवेदन [ले० श्री० पं० गंगा प्रसाद जी अग्निहोत्री जबलपुर	३४९
८. विनय [ले० मुरारी शर्मा "अभय"	३५१
९. भगवन्नाम सार है [ले० श्री० भोला बाबा अनूपशहर	३५२
१०. भक्तों के चरित्र [सम्पादक]	३५६
११. प्रेमी ग्राहकों से निवेदन	३३भ
१२. भजन	३५९

भूल सुधार।

इसी अंक के पहिले चार पृष्ठों पर ३२९, ३३०, ३३१, ३३२ को पलाय ३३३, ३३४, ३३५, ३३६, पढ़ गये हैं परन्तु मैटर ठीक है। कृपया ठीक करलें। पृष्ठ ३३६ के दूसरे कालम की दूसरी लाइन में कंसाई की जगह कसाई पढ़ें।

सम्पादक

ॐ

"कलौतु केवला भक्तिः।"

वार्षिक चन्दा २)

भक्ति

एक प्रति का ।)

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली मासिक पत्रिका।

वर्ष २ } भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, श्रावण पूर्णिमा सं० १९८५। { अङ्क ११

मङ्गलाचरण।

नमो विश्वस्वरूपाय विश्वस्थित्यन्तहेतवे।
विश्वेश्वराय विश्वाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ १ ॥

विश्वरूप के लिये नमस्कार है, विश्व की स्थिति अन्त के हेतु के लिये बिश्वेश्वर के लिये, विश्व के लिये, और गोविन्द के लिये, नमस्कार है ॥ १ ॥

नमो विज्ञानरूपाय परमानन्दरूपिणे।
कृष्णाय गोपीनाथाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ २ ॥

परमानन्द रूप, बिज्ञान रूप के लिये नमस्कार है गोपियों के नाथ कृष्ण के लिये और गोविन्द के लिये नमस्कार है ॥ २ ॥

नमः कमलनेत्राय नमः कामलमालिने ।
नमः कमलनाभाय कमलापतये नमः ॥ ३ ॥

कमल नेत्र के लिये नमस्कार है कमल माली के लिये नमस्कार है। कमल नाभ के लिये नमस्कार है और कमला पति के लिये नमस्कार है ॥ ३ ॥

वर्हापीडाभि रामाय रामायाकुण्ठमेधसे ।
रमा मानसहंसाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ४ ॥

वर्हापीड़ाभिराम के लिये, और अकुण्ठित बुद्धि राम के लिये रमामानस हंस के लिये और गोविन्द के लिये नमस्कारों पर नमस्कार है ॥ ४ ॥

कंस वंश विनाशाय केशिचाणूरघातिने ।
वृषभध्वजवन्द्याय पार्थसारथये नमः ॥ ५ ॥

कंस के वंश को विनाश करने वाले के लिये, केशी चाणूर के मारने वाले के लिये, महादेव करके वन्दना के योग्य के लिये, और पार्थ के सारथि के लिये, नमस्कार है ॥ ५ ॥

वेणुनाद विनोदाय गोपालायाहिमर्दिने ।
कालिन्दीकूल लोलाय लोल कुण्डलधारिणे ॥ ६ ॥

वेणु नाद विनोद के लिये अहि मर्दन करने वाले गोपाल के लिये कालिन्दी के किनारे आनन्द करने वाले के लिये और चपल कुण्डलके धारण करने वाले के लिये नमस्कार है ६

वल्लवीवदनाम्भोज मालिने नृत्यशालिने ।
नमः पूणतपालाय श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥ ७ ॥

सुन्दर लता के समान शरीर वाले, कमल की माला धारण करने वाले, नृत्यमें शोभायमान, भक्तों की रक्षा करने वाले श्रीकृष्ण चन्द्र को पुनः २ नमस्कार है ॥ ७ ॥

नमः पापपूणाशाय गोवर्धनधराय च ।
पूतना जीवितान्ताय तृणावर्तासु हारिणे ॥ ८ ॥

पाप के नाश करने वाले के लिये, गोवर्धन धारण करने वाले के लिये, पूतना के मारने वाले के लिये और तृणावर्त के संहारक के लिये नमस्कार है ॥ ८ ॥

निष्कलाय विमोहाय शुद्धायाशुद्ध वैरिणे ।
अद्वितीयाय महते श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥ ९ ॥

निष्कल के लिये, विमोह के लिये, शुद्धके लिये, अशुद्ध के वैरी के लिये, महान् अद्वितीय श्रीकृष्ण के लिये नमस्कार हो ॥ ९ ॥

प्रसीद परमानन्द प्रसीद परमेश्वर ।
आधिव्याधि भुजंगेन दष्टं मामुद्धर प्रभो ॥ १० ॥

हे परमानन्द ! प्रसन्न हो, हे परमेश्वर ! प्रसन्न होवो, हे प्रभो ! मैं आधि व्याधि रूप सर्प से डसा गया हूं आप मेरा उद्धार करिये ॥ १० ॥

श्रीकृष्ण रुक्मणीकान्त गोपीजनमनोहर ।
संसार सागरे मग्नं मामुद्धर जगद्गुरो ॥ ११ ॥

हे श्री कृष्ण ! रुक्मणी के पति, गोपी जन मनोहर ! मैं संसार सागर में निमग्न हूं । हे जगद्गुरो ! मेरा उद्धार करिये ॥ ११ ॥

केशव क्लेशहरण नारायण जनार्दन ।
गोविन्द परमानन्द मां समुद्धर माधव ॥ १२ ॥

हे केशव ! हे क्लेश हारिण ! हे नारायण ! हे जनार्दन ! हे गोविन्द ! हे परमानन्द ! हे माधव ! कृपा करके मेरा उद्धार करो ॥ १२ ॥

महात्माओं के वाक्य

हे मनुष्य ! तुझे उचित है कि तू बाल्यावस्था से ही अपने हृदय को धैर्य और निर्भीकता से दृढ़ बना ले ताकि तू दुःखों को धीरता से सहन करसके।

मरुस्थली में ऊंट जिस प्रकार भूख, प्यास, ताप और कष्ट झेलता है, लेकिन गिर नहीं पड़ता, इसी प्रकार मनुष्य का धैर्य सब विपत्तियों से उसे आश्रय देता है।

श्रेष्ठ आत्मा भाग्य के विद्वेष की परवाह नहीं करता, उसकी आत्मा की महत्ता में इस से कोई फर्क नहीं आता।

समुद्र-तट की चट्टान के सदृश वह दृढ़ बना रहता है, और विपत्ति रूपी तरंगों के थपेड़े उसके पांवों को नहीं उखाड़ सकते।

वह पहाड़ी दुर्ग के मीनार की तरह अपना शिर ऊपर को उठाता है, और भाग्य के बाण उसके पांवों पर गिरते हैं!

भय के समय उसके हृदय की धीरता उसे आश्रय देती है, और उसके मन की स्थिरता उसे सहायता प्रदान करती है।

कातर पुरुष की भीरु आत्मा उसे धोखा देती है और वह लज्जित होता है।

जैसे हवा के झोंके से सरकण्डा हिल जाता है वैसे ही वह दुःख की छाया से कांप उठता है।

हे मनुष्य ! मत भूल कि पृथ्वी पर तेरी स्थिति परमेश्वर की पवित्र बुद्धि द्वारा निश्चित हुई है। वह तेरे हृदय की सारी बातों को जानता है, तेरी लालसाओं की निःसारता उसे भली भांति ज्ञात है, वह प्रायः दया करके तेरी प्रार्थनाओं को अस्वीकार कर देता है।

वह व्याकुलता जिस का तू अनुभव करता है, वह विपत्तियां जिन पर तू विलाप करता है, उन का मूल तेरी मूर्खता, तेरा अहंकार और तेरी रुग्ण भावना है।

ईश्वरीय विधान पर अन्तर्विलाप न कर, प्रत्युत अपने हृदय को शुद्ध कर, न मन में यही कह कि "यदि मेरे पास सम्पत्ति, शक्ति और अवकाश हो तो मैं सुखी हूंगा" क्योंकि जिनके पास यह मौजूद हैं वे किन २ दुःखों में फंसे हुए हैं।

किसी मनुष्य को बाहर से सुखी देख कर ईर्ष्या मत कर, क्योंकि तू उसके गुप्त दुःखों को नहीं जानता।

थोड़े पर संतोष करना सब से बड़ी बुद्धिमानी है, और जो मनुष्य अपने धन को बढ़ाता है वह अपनी चिन्ताओं को बढ़ा लेता है लेकिन सन्तुष्ट मन एक गुप्त खजाना है, और वह दुःख की पहुंच से बाहर है।

यदि तू लक्ष्मी के प्रलोभनों में फंस कर न्याय मर्यादा, उदारता, और विनय को तिलाञ्जलि दे दे, तो खुद ऐश्वर्य भी तुझे दुःखित नहीं कर सकता।

भलाई एक दौड़ है जो नारायण ने नर के लिये नियत कर दी है, और सुख उस का लक्ष्य है, जहांकि दौड़ को समाप्त किये बिना कोई पहुंच नहीं सकता, फिर उसे नित्यता के प्रासादों में राजमुकुट मिलता है।

ऐसा डण्डा कहां है जो प्रेम के दरवाजे को बन्द कर सके ? प्रेमियों की आंखों को सुललित अश्रु-बिन्दु अवश्य ही उसकी उपस्थिति की घोषणा किये बिना न रहेंगे।

जो प्रेम नहीं करते वे सिर्फ अपने ही लिये जीते हैं, मगर वे जो दूसरों को प्यार करते हैं उन की हड्डियें भी दूसरों के काम आती हैं।

श्रीकृष्ण चरित्र।

गतांक से आगे।

धेनुकासुर वध ॥

क बार श्याम सुंदर श्रीकृष्णचंद्र ग्वाल बाल तथा बलदेव जी को साथ लेकर गायों को आगे करके बंशी बजाते, नाना प्रकार के खेल खेलते २ वृंदावन से बहुत दूर निकल गये। तब श्याम सुंदर के मित्र श्रीदामा आदिने कहा कि यहां से थोड़ी दूर पर ताल के वृक्षों का एक बड़ा गम्भीर वन है। वहां ताल के बड़े २ सुंदर तथा मधुर फल हैं। परंतु धेनुकासुर दैत्य वहां रहता है। वह दुष्ट गधे का रूप बनाकर उस सुंदर फलदार वन में रहता है और वह न तो आप उन फलों को खाता है और न किसी दूसरे को खाने देता है। हे कृष्ण! वह दैत्य बड़ा पराक्रमी है और उस ही जैसे बड़े २ योधा उसकी जाति के उस के साथ हैं। वह दुष्ट जहां कहीं मनुष्य को देखता है उसको तुरंत खा जाता है। इस डर से कोई भी प्राणी उस वन में नहीं जाता। वहां पशु पक्षियों ने भी भय के कारण उस वन में रहना छोड़ दिया है। हे कृष्ण! हमारी उन फलों को खाने की बड़ी इच्छा है। श्रीकृष्ण इस प्रकार के अपने मित्रों के वचन सुनकर सब ग्वाल बाल सहित उस ताल के वन की ओर चल दिये। उस वन में पहुंचते ही बलदेव जी ने एक ताल के वृक्ष को पकड़ कर बल के साथ हिलाया तो उस वृक्ष के नीचे फलों के ढेर के ढेर हो गए। पृथ्वी पर फलों के गिरने का शब्द सुनकर वह धेनुकासुर दौड़ा हुवा उस स्थान पर आया और दोनों पिछले पाओं से बलदेव जी के हृदय में एक दुलत्ती मारी। तब बलदेव जी ने उसकी दोनों टांगे एक हाथ से पकड़ कर गोफन की भांति घुमाकर एक ताल के वृक्ष से इतने बल के साथ मारा कि उस दैत्य के प्राण पखेरू निकलने के अतिरिक्त वह ताल का वृक्ष भी टूट गया। जब धेनुकासुर मर गया तो उस के भाई बंधु सब गधे क्रोधित हो कर श्रीकृष्ण बल्देव के ऊपर झपटे कृष्ण बलदेव दोनों भाईयों के सामने जो २ गधे आये उन सब को परम धाम में भेज दिया। धेनुकासुर के मरने पर सब मनुष्य निःशंक हो कर तालके वृक्षोंके फल खाने लगे और गायें हरी २ घास चरने लगीं।

कालीय दमन।

गरुड़ जी प्रायः रमणक द्वीप में सर्पों के भक्षणार्थ जाया करते थे। वहां के सर्पों ने दुःखित होकर आपस में विचार करके गरुड़ जी से प्रार्थना की, कि आप हमारा वध न किया करें। हम पीपल के वृक्ष पर बारी २ से नित्य प्रति आपके भक्षणार्थ कुछ रख दिया करेंगे। गरुड़जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली और अपनी २ बारी से सब सर्प नित्य गरुड़ जी के खाने के लिये कुछ रख देते थे। एक दिन अपने विष और पराक्रम के घमण्ड में कद्रू का पुत्र कालीय गरुड़ के भाग को आप ही खागया। तब तो भगवान् के प्यारे गरुड़ जी अत्यंत क्रुद्ध हो कर उसे मारने के लिये दौड़े। कालीय नाग भी फण उठा कर गरुड़ की ओर झपटा। परंतु जब उस ने देखा कि गरुड़ के सामने तेरी एक भी न चलेगी तब

भाग जाने की विचारी। वह नारदजी का चेला था। नारद जी ने पहिले ही बता दिया था की जब कभी गरुड़ द्वारा तू अपनी प्राण रक्षा करना चाहे तब वृंदावन के निकट यमुना के कुंड में चला जाना। वहां एक बार सौभरि ऋषि ने गरुड़जी को मछली पकड़नेसे रोका था तब गरुड जी ने उनकी आज्ञा नहीं मानी थी, तो ऋषि ने गरुड़ को शाप दे दिया था कि इस कुंड में यदि तू फिर आयेगा तो नष्ट हो जायगा। नारदजी की कही हुई बात का स्मरण करके कालीय गरुड़ के भय से वृंदावन के निकट यमुना के कुंड में निवास करने लगा। उस के विषकी अग्नि से उस कुंड का जल सर्वदा खौलता रहता था। आकाश में उड़ने वाले पक्षी उसके गरल के तापसे जल कर उस कुंड में गिर जाते थे। उस विषैले जल की लहरों के जलकणों से मिली पवन के लगने से किनारे की घास आदि भी सूख जाती थी। श्रीकृष्णचंद्र ने अपने मन में विचार किया कि इस कुंड में ऐसे विषैले सर्प का रहना अत्यंत दुःखदायक है। पशु पक्षी इस जल को पीकर मर जाते हैं। अतः उस दुष्ट को वहां से निकालने के विचार से श्रीकृष्णचंद्र अकेले ही घर से निकले और कदम्ब के वृक्ष पर चढ़ कर उस जल में कूद पड़े। श्रीकृष्ण के जल में कूदने के घोर शब्द को सुन कर कालीय तुरंत श्रीकृष्ण की ओर धाया उस समय वृजवासियों की बांई आंखें तथा भुजा फड़कने लगीं और कई प्रकार के अपशकुन होने लगे। यशोदा माता तथा अन्य व्रज वासी कृष्ण का पता लगाते लगाते घर उधर ढूंढ कर यमुना केकुण्ड पर आये। उस समय वह बल शाली कालीय श्रीकृष्ण के चारों ओर लिपटा हुवा था यशोदा माता तथा अन्य व्रजवासी श्रीकृष्ण को कालीय से ग्रसित देख कर चेष्टा विहीन हो गये और उस समय उन को तीनों लोक सूने दिखाई देने लगे।

सामर्थ्यवान होते हुए भी मनुष्य के समान लीला करने वाले कृष्ण भगवान कुछ काल सर्प की कुण्डली में रह कर उस से बाहर निकलने का विचार करने लगे। अब उन्होंने अपने शरीर को बढाना आरम्भ किया तब तो कालीय के सब बन्ध ढीले हो गये। हड्डियों के जोड़ टूटने लगे, नस नस ढीली होगई, नथनों से विष की झलें निकलने लगीं। अब श्रीकृष्ण तो अपने मन में यह विचार करने लगे कि, किसी प्रकार दाव लगाकर कालीय के फणों पर नृत्य करूं और कालीय अपना दाव विचारता था कि एक बार तो बनमाली के फिर लिपट जाऊं। अवसर पाकर श्रीकृष्ण झट फण पकड़ कर उस के शिर पर चढ़ गये और उनके नथनों में रस्सी डाल कर उसके फणों पर नृत्य करने लगे। वह इतनी फुरती से नृत्य करते थे कि सौ मस्तक वाला कालीय जिस मस्तक को भी ऊपर को उठाता था श्रीकृष्ण उसी को चरणों की ठोकर से नीचे दबा लेते थे। अब तो कालीय के सब अंग शिथिल हो गए, मुख से रक्त की धारा निकलने लगी, सब अभिमान चूर हो गया। कालीय की दुर्गति देख कर नाग पत्नियें अत्यन्त व्याकुल हो कर भगवान कृष्ण की शरण में गईं और इस प्रकार प्रार्थना करने लगीं:-

हे भगवन! आप ने इस अपराधी को जो दण्ड दिया है वह बड़ा अच्छा किया, क्योंकि आप का अवतार तो दुष्टों को दण्ड देने के लिए है। शत्रु और मित्र को आप एक जैसा समझते हो। इसी लिए आप का नाम समदर्शी है। आप दुष्टों को दण्ड देते हो और मित्र पर अनुग्रह करते हो। हे भगवन! आप के दण्ड देने से इस सर्प के सब पाप दूर हो

गए। हे महाराज! जिन आप के चरणारविंद के स्पर्श के लिए लक्ष्मी जैसी उत्तम स्त्री सब कामनाओं को तज कर अनेक वर्षों तक तप करती रहीं, उन्हें चरणारविंदों का स्पर्श इस को अनायास में ही मिल गया।

नमस्तुभ्यं भगवते पुरुषाय महात्मने।
भूतावासाय भूताय पराय परमात्मने॥

पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश इन पंच भूतों के आश्रय रूप, सब के आदि कारण. आप कारण से रहित ऐसे परम कारण परमात्मा को हम नमस्कार करती हैं।

ज्ञान विज्ञान निधये ब्रह्मणेऽनंत शक्तये।
अगुणायाविकाराय नमस्तेऽप्राकृताय च॥

आप चैतंय शक्ति करके परिपूर्ण हो, व्यापक हो, अनंत शक्तिमान, निर्गुण, निर्विकार, तथा माया के प्रवर्तक हो। आप को हम बारम्बार नमस्कार करती हैं।

नमोऽनंताय सूक्ष्माय कूटस्थाय विपश्चिते।
नानावादानुरोधाय वाच्यवाचक शक्तये॥
नमः प्रमाण मूलाय कवये शास्त्रयोनये।
प्रवृत्ताय निवृत्ताय निगमाय नमोनमः॥
नमः कृष्णाय रामाय वसुदेव सुताय च।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय सात्वतां पतये नमः॥
नमो गुण प्रदीपाय गुणात्मच्छादनाय च।
गुणवृत्युपलक्ष्याय गुणद्रष्ट्रे स्व संविदे॥
अव्याकृत विहाराय सर्वव्याकृत सिद्धये।
हृषीकेश नमस्तेऽस्तु मुनये मौनशीलिने॥
परावरगतिज्ञाय सर्वाध्यक्षाय ते नमः।
अविश्वाय च विश्वाय तद्द्रष्ट्रेऽस्य च हेतवे॥

अनंत के लिए, सूक्ष्म के लिए, कूटस्थ के लिये, सर्वज्ञ के लिये, अनेक रूप के लिये नमस्कार है। आप नेत्रों से आदि लेकर सब इंद्रियों के प्रकाश करने वाले हो, स्वतः सिद्ध ज्ञान के विषयी हो, वेद के कारण हो, प्रवृत्ति के प्रतिपादक वेद रूप आप को हम नमस्कार करती हैं। भक्तों के रक्षक राम कृष्ण-रूप वसुदेव तनय, प्रद्युम्न संकर्षण, और अनिरुद्ध रूप आप को हमारा नमस्कार है। सत्वादी गुणों के प्रकाशक हो, मन, बुद्धि चित्त, अहंकार से चैतंय निश्चय को आदि लेकर वृत्ति से जानने में आते हो, ऐसे मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार के साक्षी व अगोचर आप को हम नमस्कार करती हैं। आप की महिमा विचारने में नहीं आती परंतु सम्पूर्ण विश्व की उत्पत्ति प्रकाश करने के कारण जानने में आते हो, इंद्रियों के प्रेरक आत्मा में रमण करने वाले सत्स्वभाव आप को हम बारम्बार नमस्कार करती हैं। स्थूल सूक्ष्म सब की गति के जानने वाले हो, संपूर्ण विश्व के साक्षी हो, विश्व आप के स्वरूप में नहीं और विश्व के स्वरूप में आप नहीं इस हेतु आप को प्रणाम है। हे भगवन्! हम अबलाओं पर कृपा कीजिये। प्रभु स्वामी का यही धर्म है कि, एक बार अपनी प्रजा से जो अपराध हो जाय उस अपराध को क्षमा करदे। हे शांत स्वरूप! इस अज्ञान कालीय के अपराध को क्षमा कीजिये।

जब नाग पत्नियों ने इस प्रकार श्रीकृष्ण से प्रार्थना की तब भगवान् ने उस मूर्छित पड़े हुए कालीय नाग को छोड़ दिया। जब वह सचेत हुवा तब कहने लगा कि, हे नाथ! जब से हम उत्पन्न हुए हैं तब से ही हम दुष्ट हैं, तामसी हमारा स्वभाव है, आप की माया से हम मोहित हो रहे हैं। संपूर्ण भेदों को जानने वाले जगत् के ईश्वर आप हो। अतः

आप ही माया से छुटाने के कारण हो। हे प्रभो ! मेरे ऊपर दया करो। तब भगवान ने उस को अपना चतुर्भुज रूप दिखा कर उस का श्रम दूर किया और उस को पुनः रमणक द्वीप में जाने की आज्ञा दे कर कहा कि तेरे शिर पर मेरे चरणों के चिह्न हो गये हैं अतः तुझे अब गरुड़ भी नहीं खायगा। भगवान श्रीकृष्णचंद्र की आज्ञा पाकर कालीय सकुटुम्ब रमणक द्वीप को चला गया। भगवान की दया से इस कुंड का जल अमृतवत होगया और सब ब्रजवासी ग्वाल बालों ने आज की रात वहां पर ही बितानी विचारी। गरमी की ऋतु थी, आधी रात का समय था, ठण्डी २ पवन चल रही थी। इस से सब ब्रज वासी अचेत हो कर सो गये। उस समय दावानल नामक दैत्य उस सूखे बन को अग्नि रूप बन कर जलाने लगा और सब ब्रज वासियों को चारों ओर से घेर लिया। पवन की अनुकूलता से अनल शीघ्रता से बढने लगी। तब तो सब ब्रजवासी अत्यंत घबड़ा गये। उन को अत्यंत घबड़ाया हुआ जान विश्व के ईश्वर, अनंत शक्तियों को धारण करने वाले श्रीकृष्णचंद्र ने उस अग्नि का पान करके सब ब्रजवासियों को चिन्ता से रहित किया।

प्रलम्बासुर वध।

नाना प्रकार के पशु पक्षियों के शब्द से गुंजायमान, नदी सरोवर और झरनों से युक्त, नाना प्रकार की सघन लताओं और वृक्षों से आच्छादित तथा हरी २ घास के मखमली फरश वाले बन में श्री कृष्ण बलदेव जी ग्वाल बालों को ले कर बांसुरी बजाते हुये गाय बछड़ों सहित बैठे हुये आनंद में बाल लीला कर रहे थे। कोई राग रागिनी गाता था, कोई बांसुरी बजाता था, कोई नाचता था और कोई आनंद में उछलता था। इसी समय उस सुंदर बन में कृष्ण बलदेव को हरने के लिये कंस का भेजा हुआ प्रलम्बासुर नामक राक्षस गोपों का रूप बना कर उन ग्वाल बालों में मिल कर खेलने लगा। भगवान कृष्ण तो अन्तर्यामी थे। उन्हों ने तुरंत उस की सब बातें जान लीं।

अब भगवान कृष्ण उस दैत्य के मारने का उपाय सोचने लगे। उन्होंने सब सखाओं की दो टोलियां बनाईं। एक टोली के मुखिया तो आप बने और दूसरी के बलदेव जी बने। सब को पुकार कर यह नियम सुना दिया कि जो जीते वह हारे की पीठ पर चढ़े और हारा हुवा उस को अपनी पीठ पर चढ़ाकर भाण्डीरक बन तक ले जावे। इस प्रकार कई चढने चढाने वाले खेलों को आरम्भ किया। प्रलम्बासुर को भगवान ने अपनी मण्डली में मिलाया। पहली बार बलदेवजी की मंडली हारी, अतः न्यायानुसार श्रीकृष्णकी मंडली को भाण्डीरक बन तक लेगई। दूसरी बार श्रीकृष्ण की मण्डली हारी। तब श्रीकृष्ण की मण्डली बलदेव जी की मण्डली को भांडीरक बन ले जाने लगी। बलदेव जी प्रलम्बासुर की पीठ पर चढ़े। प्रलम्बासुर बलदेव जी को अपनी पीठ पर चढा कर बड़ी शीघ्रता से भाण्डीरक बन की ओर चलने लगा। जब वह दूर निकल गया तो उस असुर ने अपना गोप रूप त्याग कर असली रूप धारण कर लिया। बलदेव जी उस के विकराल रूप को देख कर पहिले तो कुछ डरे परंतु फिर क्रोध करके उस के शिर में एक मुक्का इतने बल से मारा कि, मुक्के के लगते ही उस का शिर फूट की भांति खिल गया, दांत टूट गये, मुख से रुधिर की धारा बह

चली जिह्वा और नयन बाहर निकल पड़े और शिथिल हो कर भूमि पर गिर पड़ा। प्रलम्बासुर को मरा देख कर ग्वाल बाल बहुत आनंदित हुये और कृष्ण बलदेव की प्रशंसा करने लगे।

"भूमा"

गर्भोपनिषद्।

यह शरीर पंचात्मक है और पाचों में वर्तमान है, छः का आश्रय है और छः के गुण योग से युक्त है। इस में सात धातु और तीन मल हैं। यह द्वियोनि है और चार प्रकार के आहारों से पूर्ण है। पंचात्मक क्यों है? इस लिए कि पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और आकाश इस में हैं। इस पंचात्मक शरीर में क्या पृथ्वी है, क्या जल है, क्या तेज है, क्या वायु है और क्या आकाश है? इस पंचात्मक शरीर में जो कठिन है, सो पृथ्वी है। जो द्रव है, सो जल है। जो उष्ण है, सो तेज है। जो संचार करता है, सो वायु है और जो अवकाश युक्त है, सो आकाश है ऐसा कहते हैं। उन में से पृथ्वी धारण करने में, जल पिण्डीकरण में, तेज प्रकाश करने में, वायु व्यूहन करने में और आकाश अवकाश-दान में उपयुक्त है। शब्द की उपलब्धि में दो पृथक श्रोत्र, स्पर्श में त्वचा, रूप ग्रहण में नेत्र, रसास्वाद में जिह्वा, सूंघने में नाक, आनंद में उपस्थ और त्याग करने में अपान है। बुद्धि से जानता है, मन से संकल्प करता है और वाणी से बोलता है। षडाश्रय कैसे है? इस लिए कि मीठा, खट्टा, नमकीन, तीखा, कड़ुवा और कषैले रस को उपलब्ध करता है। षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद, ये आठ शब्दों की संज्ञायें हैं। शब्द दो प्रकार के होते हैं, इष्ट और अनिष्ट। प्रणिधान से दस प्रकार के हो जाते हैं॥ १॥

श्वेत, लाल, काला, धुमैला पीला कपिल और मटियाला (ये सात वर्ण हैं)। यह सप्तधातुक क्यों है? जब देवदत्त के द्रव्य आदि विषम उत्पन्न होते हैं। परस्पर सौम्यगुण होने से छः प्रकार का रस है। रस से रक्त, रक्त से मांस, मांस से चर्बी, चर्बी से स्नायु, स्नायुओं से हड्डियां हड्डियों से मज्जा, मज्जा से वीर्य, और वीर्य के संयोग से गर्भ होता है। अग्नि स्थान में जठराग्नि को रखता है, पित्त के स्थान में पित्त को, वायु, वायु में से और हृदय प्रजापति में से होता है।

ऋतु-काल में संयोग से एक रात्रि रह कर कलल होता है। सात रात में बुद्बुद होता है। १५ दिन के भीतर पिंड होता है। एक महीने में कठोर होता है और दो मास में शिर के अवयव बनते हैं। तीन मास में पांव का अंश बनता है। बाद में चौथे महीने गुल्फ, पेट और कमर के प्रदेश बनते हैं। पांचवें महीने पृष्ठ वंश होता है। छठे मास मुख नाक नेत्र, और कान बनते हैं। सातवें मास जीवसे संयुक्त होता है। आठवें महीने सब लक्षणों से संयुक्त होता है। पिता का वीर्य अधिक होने से लड़का और माता का रज अधिक होने से लड़की होती है। दोनों के बीज में समानता हो, तो नपुंसक होता है। व्याकुल मन वाले के अन्धे, गंजे, कुबड़े और बौने होते हैं। परस्पर वायु के आघात से शुक्र दो प्रकार से सूक्ष्म हो जाता है, इस से युगम (जोड़े)

पैदा होते हैं। पंचात्मक समर्थ है। पंचात्मिकाबुद्धि चित्त से गन्ध रस आदि का ज्ञान और अक्षर ओंकार का चिंतन करती है। इस लिये इस एकाक्षर को जान कर (चिंतन करती है)। आठ प्रकृति हैं। सोलह विकार हैं। शरीर में यह सब उसी देही (जीवात्मा) का है। माता जो कुछ खाती पीती है, वह नाड़ी सूत्र से जाकर (बच्चे के) प्राणों का पोषण करता है। तब नवें महीने सब लक्षण और ज्ञानेन्द्रियों से पूर्ण होता है। तब पहले जन्म का स्मरण करता है शुभ और अशुभ कर्म को प्राप्त होता है ॥२

पहिले मैंने हजारों योनियां देखीं। उन में अनेक प्रकार के आहार भोग किये और अनेक तरह के स्तन पीये। पैदा हुआ और मरा। बार २ जन्म मिला। और मैंने कुटुम्ब के लिए शुभ और अशुभ कर्म किये, उन से मैं अकेला ही जल रहा हूं, (उन कर्मों से) मौज उड़ाने वाले तो सब गये। आः ! दुःख के समुद्र में पड़ा हुवा छुटकारे का कोई उपाय नहीं देखता। उस समय कहता है:-

अशुभक्षयकर्तारं फलमुक्ति प्रदायकम् ।
यदि योन्याःप्रमुच्येऽहं तत्पपद्ये नारायणम् ॥
अशुभक्षयकर्तारं फलमुक्ति प्रदायकम् ।
यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्सांख्यं योगमभ्यसे
अशुभक्षयकर्तारं फलमुक्ति प्रदायकम् ।
यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं ध्याये ब्रह्मसनातनम्

यदि योनि से छूट जाऊंगा, तो महेश्वर की शरण जाऊंगा। जो महेश्वर अशुभों के क्षय करने वाले तथा शुभ फल और मुक्ति के देने वाले हैं। यदि योनि से छुट जाऊंगा तो अशुभों के क्षय करने वाले तथा शुभ फल और मुक्ति के देने वाले नारायण की शरण जाऊंगा। यदि योनि से मैं छूटूं, तो सांख्य योग का अभ्यास करूं जो अशुभों का नाशक तथा शुभ फल और मुक्ति का देने वाला है। यदि योनि से छूटूं, तो सनातन ब्रह्म का ध्यान करूं। फिर योनि द्वार को प्राप्त होकर दुःख से अत्यंत पीड़ित हुवा-हुवा बड़े दुःख से उत्पन्न होते ही यदि वैष्णव वायु से छुआ गया, तो फिर जन्म-मरण को नहीं प्राप्त होता है और न ही शुभ एवं अशुभ कर्मों को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

इसे शरीर क्यों कहते हैं ? इसलिए कि इस के आश्रय अग्नियां हैं-ज्ञानाग्नि, दर्शनाग्नि और कोष्ठाग्नि। उन में से कोष्ठाग्नि तो अशित, पीत, लेह्य और चोष्य भेद से चार प्रकार के आहारों को पचाती है। दर्शनाग्नि रूपों का दर्शन कराती है। ज्ञानाग्नि शुभ और अशुभ कर्म को प्राप्त होती है। तीन स्थान होते हैं। मुख में आहवनीय उदर में गार्हपत्य और हृदय में दक्षिणाग्नि है। आत्मा यजमान और मन ब्रह्मा है। लोभ आदि पशु हैं। धृति, संतोष दीक्षा और बुद्धीन्द्रियां यज्ञ पात्र हैं। कर्मेन्द्रियां आहुति हैं। शिर कपाल और केश ही दर्भ हैं। मुख अंतर्वेदी, और शिर चतुष्कपाल है। वह ही दंत पंक्ति सोम है। एक सौ सात मर्म हैं,, एक सौ शिरा हैं, पांच सौ मज्जा हैं, तीन सौ साठ हड्डियां हैं, साढ़े तीन करोड़ रुवां हैं, आठ पल का माप वाला हृदय है, बारह पल की माप वाली जीभ है, एक प्रस्थ पित्त है, एक आढक कफ है, एक कुड़व शुक्र है, दो प्रस्थ मेद है, और मल-मूत्र का नियम नहीं। यह पिप्पलाद मुनि का कहा हुवा मोक्ष शास्त्र है, पिप्पलाद का कहा मोक्ष शास्त्र है।

— —

श्रद्धा ।

[ले० श्री० सूरजदेवी ॥]

भवानि शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ ।
यभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थ मीश्वरम्

मैं श्रद्धा और विश्वास के स्वरूप महादेव, पार्वती को प्रणाम करता हूं कि, जिस श्रद्धा विश्वास के विना सिद्ध लोग समाधि में स्थित होजाने पर भी ईश्वर का दर्शन नहीं कर पाते। अतः उसी श्रद्धा विश्वास को मुख्य लक्ष्य रख कर हम भी किंचित् विचारते हैं। आत्म सत्तामय होना मनुष्य का प्रथम, और मुख्य कर्तव्य है। इसी कर्तव्य को पूर्ण करने के लिये मनुष्य का हृदय परम श्रेष्ठ विशुद्ध श्रद्धा युक्त होना चाहिये। गुरु वाक्य तथा वेदशास्त्र पर श्रद्धा यही शुभ फल दाता है अतः सत्यपदार्थ तथा गुरु वाक्य पर श्रद्धा आवश्यकीय है। प्रापंचिक, तथा सांसारिक कार्यों में भी विशेष श्रद्धा पर ही आधार रखना पड़ता है। जब लौकिक कर्यों में भी श्रद्धा की अत्यन्त आवश्यकता है फिर भला भक्ति, उपदेश तथा पारमार्थिक कर्तव्यों में मनुष्य को श्रद्धा का आधार रखना पड़े तो आश्चर्य ही क्या? किसी ने कहा है "विश्वास लंगर है विना लंगर जहाज नहीं ठहर सक्ता' हम देखते हैं कि जिस पोत का लंगर डाला हुआ होता है वही जहाज अपनी जगह पर ठहर सक्ता है। उसे वायु इधर उधर नहीं हिला सकता। इसी भांति जिस मनुष्य का गुरु तथा ईश्वर पर विश्वास होता है जिस मनुष्य का अटल विश्वास रूपी लंगर फैंका हुआ होता है, वह भिन्न २ विचारों में पड़ कर कल्पना जाल में नहीं पड़ता है। उसकी बुद्धि तथा उसका मन चंचल हो कर उसको प्रपंच में नहीं डाल सक्ता। परन्तु जो विश्वास से रहित हैं वे विना लंगर के जहाज की भांति जन्म मरण, ऊंच नीच योनियों में चक्कर लगाते तथा भटकते फिरते हैं। श्रद्धा रहित कोई शुभ कार्य नहीं होता। अतएव मनुष्यों को गुरु वाक्यों तथा शास्त्र वाक्यों पर श्रद्धा रखनी चाहिये। वैसे तो गुरु वाक्य तथा वेद शास्त्र के वाक्य एक ही हैं। श्रुति तो गुरु वाक्य हैं और गुरु तथा वेद शास्त्र मनुष्य के कल्याण का मार्ग दर्शाते हैं। सद्गुरु ने कहा कि हे शिष्य! तू अमुक मंत्र का जप किया कर, इसके जप करने से तुझे प्रत्यक्ष ईश्वर के दर्शन होजायंगे। यदि शिष्य इन वाक्यों पर पूर्णतया विश्वास रख चित्त को स्थिर कर पूर्ण प्रेम से जप करता है, तो निःसन्देह उस को गुरु देव के कथनानुसार ईश्वर के साक्षात्कार दर्शन होगें। परंच इसके विपरीत अपने प्रभु के वाक्यों पर संदेहान्वित होकर यदि अश्रद्धावान् होता है तो वह अपने अभीष्ट से पिछड़ निराशत्व को प्राप्त होगा। वह सोचता है कि "गुरु जो कहते हैं कि, इस छोटे से मंत्र के जपने के प्रभाव से ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन होंगे यह बात कहां तक सत्य है, यदि निःसंदेह सत्य होती तो न मालुम इस मंत्र को जप कर किस किस के भाग्य उदय होते, साक्षात्कार दर्शन होता ? क्या परमेश्वर मुझे दर्शन देगें ? परमात्मा ने किस २ को दर्शन दिये हैं जो मुझे देंगे ? ऐसे ही मंत्रों से ईश्वर के दर्शन होते तो सब ही को हो जाते ! परन्तु फिर भी मंत्र जपलेना चाहिये, देखें क्या २ प्रभाव हमारे दृष्टि गोचर होता

है"। भला ऐसे निश्चय से क्या दर्शन होते हैं? अश्रद्धालु को जो फल मिलता है वही दशा उसकी होती है और लाभ से वंचित रह जाता है।

अश्रद्धा सर्वत्र और सर्वदा बाधक है अतः त्याज्य है। द्वापर युग के अंत में श्रीकृष्णावतार श्रीहरिने युद्ध के समय जो उपदेश दिया है उसमें कहा है कि,

"संशय आत्मा विनश्यति"

"अविश्वासो न कर्तव्यः सर्वथा बाधकस्तु सः।

संशयात्मा वाला नाश को प्राप्त होता है।

नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मना।

संशयात्मा वाले को न इस लोक में सुख है न परलोक में सुख होता है। तात्पर्य यह है कि बारम्बार संशय करने वाला मनुष्य किसी एक निश्चय, पर नहीं टिक सक्ता। क्योंकि वह जिस विषय पर विचारता है उसी में सत्य झूठ का संशय कर लेता है। बस! फिर फिसल जाता है और ऐसे मनुष्य से कोई भी सत्साधन नहीं बन सक्ता। प्रत्युत कष्ट ही पाता है। इससे गुरु वाक्य पर तथा और कार्यों में भी निरा श्रद्धालु होना चाहिये। मेरा कथन विशेष तथा सद्गुरु के वचन पर श्रद्धा रखने के लिये है। अश्रद्धालु चाहे जितना यत्न करे परन्तु कृत्कार्य नहीं होता। इस विषय पर कितने ही सांसारिक तथा व्यवहारिक दृष्टान्त मिलते हैं।

बच्चा जब कि प्रथम बिलकुल सब विद्याओं से अनभिज्ञ तथा अजान होता है तो उसको विद्वान तथा दक्ष बनाने के लिये पढ़ाया जाता है। उस समय अध्यापक पट्टी पर अथवा सलेट में "अ" यह अक्षर लिख कर देता है और कहता है कि, बोल "अ"। अब यदि वह बिना विचारे अध्यापक पर विश्वास कर लेता है कि, निःसन्देह जो यह कहते हैं यह 'अ' ही है और उसके वचनों पर श्रद्धा रखकर पढ़ता चला जाता है तो वह सम्पूर्ण विद्या पढ़ कर विद्वान बन जाता है। विद्वान ही नहीं बल्कि जिस दावे से अध्यापक ने कहा था कि बोल यह "अ" है उसी दावे से वह दूसरों को विश्वास दिलाता और कहता है कि, यह अक्षर "अ" है। इसका तात्पर्य प्रत्यक्ष है। यह साधारण दृष्टांत है दार्ष्टान्त यह है कि जो गुरु वाक्य पर इसी बालक की भांति अपनी चीं चपट छोड़ श्रद्धा विश्वास रख कर उनकी आज्ञानुसार कार्य करता है वह स्वयं पूर्ण तथा ईश्वर को जान औरों को भी ईश्वर दर्शन कराने के योग्य होजाता है। जैसे कि बच्चा अध्यापक पर विश्वास रख कर सब अक्षरों को पढ़ता चला जाता है और फिर दूसरों को पढ़ाता है। परंतु इसके विपरीत यदि वह अध्यापक से कहता कि इसे मैं "अ" क्यों कहूं क तथा च, म अथवा अन्य और ही क्यों न कहूं। मुझे क्या पता यह 'अ' है? मैं क्योंकर जानूं कि यह अ है? मैं तो इसे 'अ' नहीं कह सक्ता। इस प्रकार वह अपने गुरुके वचन न मानने से औरों को तो क्या पढ़ावेगा स्वयं ही अनपढ़ तथा मूर्ख रह जावेगा और दुनियां में मूर्खों में शुमार हो कर यश कीर्ति तथा सुख से रहित होगा। फिर आप ही विचारो कि जो मूर्ख तथा अश्रद्धालु है उसको परलोक में शुभ गति कैसी? क्योंकि बिना श्रेष्ठ जनों की बात का विश्वास किये कुछ भी नहीं प्राप्त हो सक्ता है। जब एक साधारण जनके और साधारण विद्या के जानने में अश्रद्धा इतनी बाधक है तो पाठक विचारिये कि सर्वोत्तम भगवत्प्राप्ति विषय ईश्वर रूप श्री गुरुदेव के वाक्यों पर विश्वास न रक्खे उसका कल्याण क्योंकर और कैसे हो सक्ता है? विचारवान् पाठक अपने हृदय

में इसे बिना लिखे ही अनुभव करलेंगे।

आप समझ गये होंगे कि श्रद्धा कितना आवश्यकीय कर्तव्य है। श्रद्धा बिना सुख से व्यवहार भी नहीं सिद्ध हो सकता है अतः समझ में आया कि श्रद्धा विश्वास ही कल्याण का कारण है श्रीभगवान् श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं। यथा:-

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति

श्रद्धा वाला जितेंद्रिय पुरुष तत्परायणी याने सर्व भाव से उस ज्ञान के ही अभ्यास में लगा रहने वाला होने से उस ज्ञान को शीघ्र पाता है और ज्ञान को पाकर शीघ्र परम शान्ति को प्राप्त होता है।

सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥

हे भारत! सम्पूर्ण देहधारियों की अन्तःकरणानुकूल श्रद्धा होती है यह पुरुष श्रद्धामय है जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वह वैसा ही हो जाता है। भगवान् कहते हैं:-

श्रद्धा विरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते।

श्रद्धा से रहित किया यज्ञ तामस यज्ञ कहलाता है। तात्पर्य यह है कि, यज्ञ मनुष्यों को सद्गति देने वाला है परंतु श्रद्धा युक्त हो तब शुभ फल दायक है। अश्रद्धा से किया हवन दान," तप, भजन आदि सत्कर्म भी केवल प्रयास मात्रही हैं। अतः गुरु वाक्य तथा सत्कर्म पर श्रद्धा अवश्य होनी चाहिये। इस विषय में महादेव जी से पार्वति जी ने प्रश्न किया था कि "हे देवाधिदेव! इस जगत् में मैं आपका भजन पूजन करने वाले तो बहुत देखती हूं परंतु आपको प्राप्त होते हुये विरले ही देखती हूं, इसका क्या कारण है? जो आपका भजन पूजन करेंगे वह आपको प्राप्त तो अवश्य ही होंगे इसमें तो संदेह नहीं। यह सुन श्रद्धामय शंकर ने कहाः हे सती! तुमने जो कहा सो तो ठीक है, परन्तु मेरे भक्त जनों में बहुत भेद है। जो सबसे अधिक दृढ़तम श्रद्धा वाले होंगे मुझको वही प्राप्त होंगे अन्य नहीं।" तब उमाने कहा-"कि हे नाथ! मैं आपके दृढ़तम भक्तों को देखना चाहती हूं वे कैसे होंगे, महादेव जी ने कहा-प्रिय! भक्त का पार लेने में सार नहीं" परंतु किसी दिन तुम्हारी इच्छा पूरी करदी जावेगी"। इस बात को कितने ही दिन व्यतीत हो गये। वसन्त ऋतु में महाशिव रात्रि का दिन आया। इस दिन महादेव जी का उत्सव मनाया जाता है। सृष्टि लीला कुछ अद्भुत दृश्य दिखारही थी। जहां देखो वहीं शिवालयों पर धूमधाम से सजावट की तय्यारियां हो रहीं थीं ध्वजा पताकाओं की भरमार थी। शिव भक्त मनभर आज दिन शिवजी का शृंगार करते हैं। परंतु क्या करें शिवजी तो अन्य ठाकुर मूर्तियों की भांति हाथ पैर वाले नहीं हैं, किन्तु वे तो विकार रहित इंद्रियों के अर्थों तथा इंद्रियों से रहित हैं, केवल निराकार हैं। भक्तों को सहारा देने के लिये एक पिंड कीसी आकृति धारण करली है। अतः भक्तों ने विवश होकर शिव मन्दिरों को तथा भैरवादिगणों के मन्दिरों को सजाना आरम्भ करदिया था। यत्र तत्र घण्टे घनन२ की ध्वनि कर रहे थे। क्या बाल, क्या वृद्ध क्या युवा सबही त्रिपुण्ड लगाये हुये थे, मुख से हर२ शम्भो! पार्वती पते! कैलाश पते! गिरिजा पते! हर २ शिव २ की ध्वनि गूंज रही थी। सब ही महादेव के रंग में रंगे हुये दिखलाई देते थे। ब्राह्मण लोग बारंबार शिव के प्रसन्नार्थ रुद्री की आवृत्तियां कर रहे थे। कोई २ षोडशोपचार से पूजा कर रहे थे, शिव लिंग पर अखण्ड जल धारा चढ़ रही

थी, मानो आकाश में छिद्र करके इंद्र ने मूसलाधार वर्षा की हो। कोई बिल्वपत्र कोई चन्दन पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य दे रहे थे, कहीं कर्पूर की आरती हो रही थी, कोई भक्त निष्ठ केवल नमस्कार ही करते थे, कोई बंब का नाद कर रहे थे. कोई नाच रहे थे, किसी२ ने अपने हाथ के ऊपर शिव लिंग की स्थापना कर रक्खी थी अतः उस हाथ को ऊपर उठा रक्खा था जो सूख कर लकड़ी होगया था। अधिक क्या वाराणसी पर जाने वाले शिव भक्त तहां का अद्भुत दृश्य जानते ही होंगे अधिक लिखने से लेख का कलेवर बढ़ जायगा। काशी जी में जो शंकर का निवास स्थान है वहां ऐसी शोभा तथा दृश्य था मानों यह साक्षात् शिवपुरी है, और ये भक्त लोग शिव गण हैं। अधिक भीड़ के कारण विश्वनाथ के दर्शन दुर्लभ हो रहे थे। ऐसा सुअवसर देख महादेव जी ने पार्वती जी को कहा कि हे गिरिनन्दनी! यदि उस दिन की इच्छा पूरी करनी हो तो आज मेरे साथ चलो। पार्वती जी तुरंत शंकर के साथ चलदीं। जब महादेव पार्वती वाराणसी के समीप पहुंचे तो शिव ने स्वयं एक वृद्ध, अशक्त पुरुष का रूप धारण किया और पार्वती जी षोडश वर्षीया सुकुमार युवति बनी। नन्दी भी वृद्ध बैल बनगया। इन्होंने भी अन्य भक्तों की भांति मणि कर्णिका पर स्नान किया और एक घट भर कर विश्वनाथ के दर्शन को चले। रास्ते में हरये नमः, शिवाय नमः, उमापति, आदि महादेव के नामों की गर्जना हो रही थी। और सब लोग दर्शनोत्कण्ठा से शीघ्रता से चले जा रहे थे। शैलराजकुमारी ने जब यह दृश्य देखा तो मन में विचारा कि महादेव जी तो कहते थे कि श्रद्धा वाले निष्ठवान भक्त विरले हैं परंतु मैं तो सैकड़ों निष्ठावान श्रद्धालु भक्त देखती हूं! क्या ये शंकर को प्राप्त नहीं होंगे? महादेव ने अन्तर्यामित्व से जान कर कहा कि, देवी! धीरज धरो भक्त की परीक्षा अभी होती है। पार्वती जी महादेव के आगे २ धक्के मुक्के खाते चल रही थी। उस समय ऐसी भीड़ थी कि अकेले हृष्ट पुष्ट मनुष्य का निकलना कठिन था। जैसे तैसे पार्वती जी बैल की डोरी पकड़े आगे २ चल रही थी, महादेव जी वृद्ध, जर्जर तीन टांग वाले बैल पर बैठे हुये थे लोग इनको देख २ कर हंस रहे थे। कोई २ दयावान् कहते थे कि बहन! तुम भीड़ से बाहर २ चलो इस तरह चलते २ कीचड़ से भरा हुआ एक गढ़ा आया। शंकर ने पार्वती को उसी तरफ खड्डे की तरफ) चलने का इशारा किया। पार्वती नन्दी को उसी तरफ ले गई। बैल डगमग २ करता पीछे २ चला जाता था, इतने में उसका पांव फिसल गया और वह बूढ़ा शंकर धड़ धम करते हुए गढ़े में गिर पड़े। यह देख कितने ही लोग तो खिल खिला कर हंस पड़े और कितनों को ही दया आई, वे निकालने चले! पार्वती मार्ग को लोगों को पुकारने लगी "अरेरे! मेरे वृद्ध पति को दया करके कोई निकालो। दैव योग से उस गड्ढे में दलदल थी बैल तथा बुड्ढा जितना निकलने का प्रयत्न करते थे उतना ही दलदल में नीचे को फंसते जाते थे। पार्वती के पुकारने से तथा कोई २ दया से द्रवीभूत होकर जो २ लोग आये थे उन से शंकर ने कहा कि "भाइयो मेरे निकालने में तुम्हारी प्राण हानि हो यह ठीक नहीं। अतः जो मनुष्य शंकर का अनन्य भक्त हो, दृढ़ श्रद्धा वाला हो वही मुझे निकाल सक्ता है इसके विपरीत संशयात्मा वाला मुझे स्पर्श करते ही भस्म हो जायगा इसमें सन्देह नहीं।" यह सुन कर लोग चलते बने और कहने लगे देखो दया करके बुड्ढे को निकालें तो स्वयं जल कर भस्म होजांव "धर्म करते

कर्म फूटे " भाई कैसे भी समझ कर बाहर निकालें परंतु अपने मनका तो भरोसा नहीं। कौन जाने कैसा संकल्प विकल्प उठ जाय! कैसी भी श्रद्धा रक्खें आखिर रहते तो हैं परिणाम (तबदीली) वाली दुनियां में। अत्यन्त निष्ठावान कैसे हो सक्ते हैं। शंकर ने कोई कार्य सिद्ध नहीं किया होगा तो बुरा भला भी मन में आया होगा। अतः हम तो इस बुड्ढे को स्पर्श कर नहीं सकते। ऐसी तर्कना करते हुए चले गए। कोई २ तो निन्दा भी करने लगे कि, कितना बुड्ढा है और साथ कैसी नव यौवना सुंदरी ले रक्खी है। तब देवेश ने देववाणीमें देवीसे कहा कि, देवी देखा ये मेरे भक्त हैं, जो साक्षात् तरण तारिणी भागीरथी में स्नान करते हैं मुख से शिव २ उच्चारते हैं! कोई तो हर २ शिव २ के अतिरिक्त और कुछ भी शब्द नहीं बोलते हैं तथा अन्य भी कई क्रियायें भक्त बनने की करते हैं! तो क्या ये श्रद्धा रहित मुझ को पा सकते हैं? कदापि नहीं। परंतु धीरज रक्खो कोई निष्ठावान् भक्त भी निकलेहीगा, वसुंधरा नितांत शून्य भी नहीं है। भक्त लोग पूर्ववत् अब भी स्नान करके तथा कोई स्नानार्थ चले जा रहे हैं। पार्वती जी जिस प्रकार यात्रीगण सुने पुकार पुकार कर कहरही थी, अरे पुण्य संचय करने वालो! शिव भक्त तुम सब स्नान मात्र से पवित्र हुए विश्वनाथ का दर्शन करते हो, मुझ अबला पर दया करके मेरे वृद्ध पति को निकालो। अरे मैं दयामात्र की याचना करती हूं धन दौलतकी नहीं। ऐसे कातर तथा करुणोत्पादक शब्द सुकर शिव भक्त आये और शंकर को निकालने लगे, ज्यों ही बाबा शंकर ने वही बात कही "कि जो शिवभक्त श्रद्धालु संशयात्मा से रहित है वही निकाल सकेगा अन्यथा स्पर्श करते ही भस्मीभूत हो जायगा"। महादेव के यह बचन सुन कर सब कानों पर हाथ रखकर चलदेते हैं, और वृद्धको भांति२ के तानें देते हैं। वे नहीं जानते कि हमारी परीक्षा के लिये ही यह दलदल में बुड्ढा कसोटी रूप है। संसार में इसी भांति अश्रद्धालु जीव विमूढ हो माया जाल में फंसते आये हैं और फसेंगे। प्रातः काल से लेकर तीसरे पहर तक पार्वती जी चिल्लाती रहीं। चिल्लाते २ कण्ठ सूख गया, गला बैठ गया, रोते २ नेत्र लाल हो गये! इधर वृद्ध नादिये का भी बुरा हाल था बिचारे का हांफते २ नाकों से मुंह भर गया, आंखें बाहर निकल आई। परंतु ऐसी दशा में कोई पूर्ण शिव भक्त उन को निकालने वाला नहीं आया। तो पार्वती जी घबराकर कहने लगीं कि, हे प्रभो! अब तो दया करो और कैलाश को चलो मैं ऐसे अश्रद्धालु और निर्दई लोगों में क्षण भर भी नहीं ठहरना चाहती हूं।

तब महादेव जी ने कहा देवी! धैर्य धरो कोई न कोई पूर्ण श्रद्धालु भक्तभी आवे हीगा। मनुष्यों का आना जाना कुछ कम हुवा। पार्वती जी की चिल्लाहट जारी थी, बूढ़े शंकर भी कीचड़ में कांप रहे थे। इतने में एक मुंड सचैल स्नान करके विश्वनाथ के दर्शन को जा रहा था। उस मुंड ने पार्वती जी का हृदय द्रावक करुण क्रन्दन सुना और उधर ही मुड़ा। परंतु वृद्धने वही अपनी प्रतिज्ञा कह सुनाई। "भाइयो! धीर धरो अति साहस न करो मेरी बात सुनो, पूर्ण-निष्ठावाला शिव का अनन्य भक्त ही मुझे स्पर्श कर सकता है, अन्यथा वह भस्मसात् हो जायगा"। यह सुनतेही सब घबराये और पीछे हटकर और खड़े हो गये। बस फिर क्या था बहुत से मनुष्यों को देख वहां बहुत भीड़ जमा हो गई। इस भीड़ में से एक पागल सा हृष्ट पुष्ट मनुष्य जिस को कि इस मुंड के तथा ग्राम के लोग उन्मत्त कहते थे आया, और शिवजी

से बाहर निकालने को हाथ बढ़ाने के लिए कहा। बुढ़े ने कहा, मेरी बात तो तू ने सुन ही ली है अतः विचार कर कार्य कर। नहीं तो जीव, और लाज दोनों देनी पड़ेगी। तब वह पुरुष बोला, 'महाराज! आप वृद्ध होने पर भी ऐसी मिथ्या शंका करके मुझे क्यों भरमाते हो ? यह लोग तो मूर्ख हैं परंतु आप भी ऐसा कैसे कहते हैं ! हे ब्रह्मदेव ! सर्व वेदों का अर्थ प्रदर्शित करने वाले, जगत् को दृढ़ नियम में बांधने वाले धर्म-शास्त्रों की अवहेलना मैं कैसे कर सकता हूं। शास्त्रों की आज्ञा अनिवार्य है। शास्त्र में श्रीगंगा जी को त्रैलोक्य पाविनी, तरण तारिणी, सर्व पाप विनाशिनी कहते हैं। भगवती भागीरथी ने भूलोक में अवतरते ही साठ हज़ार सगरके पुत्रोंका उद्धार किया है। अब भी लाखों का उद्धार करती है। अतः गृहापर्व के दिन श्रीगंगा में स्नान करके आ रहा हूं फिर भला मेरे अंदर पाप का लेश मात्र कैसे रह सकता है! कदापि नहीं। हर २ कैसे अधर्म की बात ! त्रिभुवन तारिणी त्रिपापा गंगा पर ऐसा अविश्वास और आक्षेप! क्या मैं श्रद्धालु तथा शिव पर पूर्ण निष्ठावान् नहीं ! मुझे तो केवल श्री शिव जी का ही भरोसा है। वे ही प्रतिज्ञा रक्खेंगे। मैं शुद्ध चित्त से कहता हूं मैंने एक काशी विश्वनाथ के सिवाय किसी पर श्रद्धा नहीं रक्खी है। फिर मुझे डर कहे का ? लाओ जल्दी हाथ बढ़ाओ मुझे देर होती है। मैं निष्पाप हूं, गंगा में स्नान करके आया हूं। भगवान् का नाम उच्चारण करनेसे क्या कोई पापी बन सकता है? कदापि नहीं। उसकी ऐसी घोषणा सुन कर पार्वती स्तब्ध होगई। वृद्ध शंकर ने कहा, धन्य है २ तूही पूर्ण श्रद्धा वाला और सचमुच निष्पाप है। गंगा तथा विश्वनाथ के नाम का महात्म्य सार्थक करने वाला तूही है और तो यह सब घंटा बजा कर बं बं कर व्यर्थ ही परिश्रम उठाते हैं। ये अविश्वासी तेरी भी महिमा नहीं जानते हैं। परंतु क्या चिंता तू तो निस्पृह है तू परम दुर्लभ पद को प्राप्त हो। ऐसा कह कर वृद्ध ने हाथ ऊपर को बढ़ाया, निष्पाप पात्री पकड़ने को झुका, तत्क्षण वह वृद्ध बैल तथा वृद्ध और सुंदरी अदृश्य हो गये। यह महान् आश्चर्य देख कर सब विस्मित हो गये और उस भक्त के चरणों में बार-बार वंदना करने लगे और कहने लगे यह वृद्ध पुरुष प्राकृतिक पुरुष नहीं किन्तु स्वयं परमात्मा था। अरे हमें धिक्कार है। इस भक्त के प्रसाद से भगवान् ने रूपान्तर में दर्शन दिये परन्तु हम भाग्यहीन नहीं समझ सके। ऐसा कह किसी ने तो गड्ढे की मिट्टी मस्तक पर लगाई कोई सारे शरीर पर लगाने लगा। परन्तु अब पीछे पछताने से क्या हो सकता था।

अब पछताये होत क्या,
जब चिड़िया चुग गई खेत।

कैलाश पर जाते हुए भोलानाथ ने पार्वती जी से कहा देवी ! तू ने मेरे दृढ़ विश्वासी भक्त को देखा, कैसा पूर्ण निश्चय वाला था उस के समान किसी और शिव भक्त को धारण न थी और तो केवल बाह्य भक्ति का आडंबर करते थे। श्रद्धा रहित भक्त मुझे कदापि नहीं प्राप्त हो सकता। हे देवी ! यदि ऐसे यह सारे भक्त मुझ को प्राप्त होने लगें तो फिर संसार में प्रपंची कौन रहे। इन वचनों से पार्वती जी के मन का समाधान पूरा २ हो गया। और वे समझ गईं कि केवल बाह्याभ्यान्तर की भक्ति से भगवत्प्राप्ति नहीं हो सकती किंतु भगवान् गुरु में पूर्ण श्रद्धा होनी चाहिये। श्रद्धा विश्वास के बिना किसी भी मतमतान्तर का कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। वेद शास्त्र तथा गुरु के वचनों पर श्रद्धा रखना ही मुक्ति का खुला हुआ

द्वार है। भगवत्प्राप्ति के दश नियमों में दूसरा नियम है कि, सद्गुरु के वचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे।

अपूर्ण

मानव धर्म सार।

द्वादशोऽध्यायः ॥

मानसं मनसैवायमुपभुंक्ते शुभाशुभम्।
वाचा वाचा कृतं कर्म कायेनैव च कायिकम् ॥

मन से किये शुभ अशुभ कर्म को मन से, वाणी से किये को वाणी से और शरीर से किये को शरीर से भोगता है।

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम् ॥

शरीर से किये कर्मके दोषोंसे मनुष्य स्थावर योनि को, वाणी से किये कर्मों से पक्षी और पशु योनि को और मन से किये पापों से नीच योनिको प्राप्त होता है।

त्रिदण्डमेतन्निक्षिप्य सर्वभूतेषु मानवः।
कामक्रोधौ तु संयम्य ततः सिद्धिं नियच्छति ॥

मनुष्य इन तीनों दण्डों को सब जीवों के विषय में लगा कर काम और क्रोध को रोक कर सिद्धि को प्राप्त होता है।

योऽस्यात्मनः कारयिता तं क्षेत्रज्ञं प्रचक्षते।
यः करोति तु कर्माणि स भूतात्मोच्यते बुधैः।

इस शरीर का जो प्रवर्त्तक (काम में लगाने वाला) है उसको क्षेत्रज्ञ कहते हैं, और जो कर्म करता है उस को बुद्धिमान् भूतात्मा कहते हैं॥

जीवसंज्ञोऽन्तरात्मान्यः सहजः सर्वदेहिनाम्।
येन वेदयते सर्वं सुखं दुःखं च जन्मसु ॥

एक और अन्तरात्मा जीव नाम वाला है, जो सब देह धारियों का स्वाभाविक साथी है। जिस से हर एक जन्म में सारे सुख दुःख को जानता है।

असंख्या मूर्त्तयस्तस्य निष्पतन्ति शरीरतः।
उच्चावचानि भूतानि सततं चेष्टयन्ति याः ॥

उस (परमात्मा) के शरीर से असंख्य मूर्त्तियें निकली हैं, जो ऊंचे नीचे भूतों को सदा चेष्टा कराती हैं।

यो यदैषां गुणो देहे साकल्येनातिरिच्यते।
स तदा तद्गुणप्रायं तं करोति शरीरिणम् ॥

इन में से जो गुण जब देह में पूरा २ बढ़ता है वह तब उस देही को उस गुण की अधिकता वाला बना देता है।

सत्त्वं ज्ञानं तमोऽज्ञानं रागद्वेषौ रजः स्मृतम्।
एतद्व्याप्तिमदेतेषां सर्वभूताश्रितं वपुः ॥

सत्व का लक्षण ज्ञान है, तम का अज्ञान। राग द्वेष रजस के कहे हैं, इनका यह लक्षण सब प्राणी शरीरों में व्यापक है।

तत्र यत्प्रीतिसंयुक्तं किंचिदात्मनि लक्षयेत्।
प्रशान्तमिव शुद्धाभं सत्त्वं तदुपधारयेत् ॥

सो मनुष्य जब अपने अन्दर सुख से भरा हुआ गहरी शान्ती वाला, मानो शुद्ध प्रकाश वाला जो कुछ प्रतीत करे, उसे सत्व निश्चय करे।

वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धर्मक्रियात्मचिन्ता च सात्विकं गुण लक्षणम् ॥

वेदका अभ्यास, तप, ज्ञान, शौच, इंद्रिय संयम, धर्म का अनुष्ठान आत्म विचार ये सत्व गुण के चिन्ह हैं।

आरम्भरुचिताऽधैर्यमसत्कार्यपरिग्रहः।
विषयोपसेवा चाजस्रं राजसं गुणलक्षणम् ॥

कर्मों में रुचि, धीरज न होना, निषिद्ध कर्मों का स्वीकार, लगातार विषयों की सेवा यह रजोगुण के चिन्ह हैं।

लोभः स्वप्नोऽधृति क्रौर्य नास्तिक्यं भिन्नवृत्तिता
याचिष्णुता प्रमादश्च तामसं गुणलक्षणम् ॥

लोभ, निद्रा, कायरपन, क्रूरपन, नास्तिक पन, आचार का त्याग, प्रमाद, और मांगना ये तमोगुण के लक्षण हैं।

यत्कर्म कृत्वा कुर्वंश्च करिष्यं चैव लज्जति।
तज्ज्ञेयं विदुषा सर्वं तामसं गुण लक्षणम् ॥

जिस कर्म को करने के पीछे, करते हुये वा करने में, लज्जा आती है वह सब बुद्धिमान को तमोगुण का चिन्ह जानना चाहिये।

येनास्मिन् कर्मणा लोके ख्यातिमिच्छति पुष्कलाम्
न च शोचत्यसम्पत्तौ तद्विज्ञेयं तु राजसम् ॥

जिस कर्म से इस लोक में बड़ी प्रसिद्धि चाहता है, और असिद्धि में शोक नहीं करता वह रजोगुण का चिन्ह जानना चाहिये।

यत्सर्वेणेच्छति ज्ञातुं यन्न लज्जति चाचरन्।
येन तुष्यति चात्माऽस्य तत्सत्वगुणलक्षणम् ॥

जब पूरे तौर से जानना चाहता है, जिसका आचरण करता हुआ लज्जा नहीं करता है, जिससे इसका आत्मा प्रसन्न होता है, वह सत्व गुण का चिन्ह है।

तमसो लक्षणं कामो रजसस्त्वर्थ उच्यते।
सत्वस्य लक्षणं धर्मः श्रैष्ठ्यमेषां यथोत्तरम् ॥

तम का लक्षण काम है, रज का अर्थ है, सत्व का लक्षण धर्म है, इनमें से अगला २ श्रेष्ठ है।

देवत्वं सात्विका यान्ति मनुष्यत्वं च राजसाः।
तिर्यक्त्वं तामसा नित्यमित्येषा त्रिविधा गतिः

सत्व गुणी देवता भाव को प्राप्त होते हैं, रजोगुणी मनुष्य भाव को प्राप्त होते हैं, तमोगुणी तिर्यक् योनि को प्राप्त होते हैं ये तीन प्रकार की गति हैं।

स्थावराः कृमिकीटाश्च मत्स्याः सर्पाः सकच्छपः
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः ॥

पौदे, कृमि, कीड़े, मछलियें, सर्प, कछुवे पशु और मृग ये तमोगुणी अधम गति है।

हस्तिनश्च तुरंगाश्च शूद्रा म्लेच्छाश्च गर्हिताः
सिंहा व्याघ्रा वराहाश्च मध्यमा तामसी गतिः

हाथी, घोड़े, शूद्र, निन्दित म्लेच्छ, सिंह, वराह, और सूअर ये तमोगुणी मध्यम गति है।

चारणाश्च सुपर्णाश्च पुरुषाश्चैव दाम्भिकाः।
रक्षांसि च पिशाचाश्च तामसीषूत्तमा गतिः ॥

चारण, सुपर्ण, दम्भी पुरुष, राक्षस और पिशाच ये तमोगुणी उत्तम गति है।

भल्ला मल्ला नटाश्चैव पुरुषाश्चकुवृत्तयः।
द्यूतपानप्रसक्ताश्च जघन्या राजसी गतिः ॥

भल्ल मल्ल, नट और खोटी जीविकाओं वाले पुरुष जूवे और मद्य पान के व्यसनी ये रजोगुणी अधम गति है।

राजानः क्षत्रियाश्चैव राज्ञां चैव पुरोहिताः।
वादयुद्धप्रधानाश्च मध्यमा राजसी गतिः ॥

राजे, क्षत्रिय, राजाओं के पुरोहित और वाद युद्ध के प्यारे वे रजोगुणी मध्यम गति है।

गन्धर्वा गुह्यका यक्षा विबुधाऽनुचराश्च ये।
तथैवाप्सरसः सर्वा राजसीषूत्तमागतिः ॥

गन्धर्व, गुह्यक, यक्ष और जो देवता के अनुचर हैं (विद्याधरादि) तथा सारी अप्सरायें वे रजोगुणी उत्तम गति है।

तापसा यतयो विप्रा ये च वैमानिका गणाः।
नक्षत्राणि च दैत्याश्च प्रथमा सात्विकी गतिः

तपस्वि, यति, ब्राह्मण, विमानों पर विचरने वाले, नक्षत्र और दैत्य ये सत्व गुणी अधम गति है।

यज्वान ऋषयो देवा वेदा ज्योतींषि वत्सराः।
पितरश्चैव साध्याश्च द्वितिया सात्विकी गतिः

यज्ञ करने वाले, ऋषि, देवता, वेद, ज्योतीषि, बत्सर, पितर और साध्य ये दूसरी सत्व गुणी गति है।

ब्रह्मा विश्वसृजो धर्मो महानव्यक्तमेव च।
उत्तमां सात्विकीमेतां गतिमाहुर्मनीषिणः ॥

ब्रह्मा, विश्व के रचने वाले, धर्म, महान्, अव्यक्त, इसको बुद्धिमान् सत्वगुणी उत्तम गति कहते हैं।

इन्द्रियाणां प्रसंगेन धर्मस्याऽसेवनेन च।
पापान् संयाति संसारानविद्वांसो नराधमाः ॥

इंद्रियों के लगाव से, धर्म पर न चलने से, मूर्ख अधम पुरुष पाप गतियों को प्राप्त होते हैं।

यां यां योनिं तु जीवोऽयं येन येनेह कर्मणा।
क्रमशो याति लोकेऽस्मिन्स्तत्तत्सर्वं निबोधतः

जिस २ कर्म से यह जीव जिस २ योनि को इस लोक में क्रमशः प्राप्त होता है, उस सारे को जानो।

यादृशेन तु भावेन यद्यत्कर्म निषेवते।
तादृशेन शरीरेण तत्तत्फलमुपाश्नुते ॥

जैसे भाव से जिस २ कर्म का सेवन करता है वैसे २ शरीर से उस २ फल को भोगता है।

वेदाभ्यासस्तपोज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः।
अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयसकरं परम् ॥

वेद का अभ्यास, तप, ज्ञान, इंद्रियों का संयम, अहिंसा और गुरु सेवा ये उत्तम मोक्ष साधन है।

सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वं भूतानि चात्मनि।
समं पश्यन्नात्मयाजी स्वाराज्यमधिगच्छति ॥

सब भूतों में आत्मा को और सब भूतों को आत्मा में सम देखता हुवा आत्मा का पुजारी मोक्ष को प्राप्त होता है।

पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम्।
अशक्यं चाप्रमेयञ्च वेदशास्त्रमिति स्थितिः ॥

वेद मनुष्यों का, देवताओं का और पितरों का सनातन नेत्र है, वेद शास्त्र अशक्य है अप्रमेय है, यह मर्यादा है।

या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः।
सर्वास्ता निष्फलाःप्रेत्य तमो निष्ठा हि ताः स्मृताः

जो स्मृतियें वेद मूलक नहीं और जो कुदर्शन (कुतर्कों वाले दर्शन) हैं वह सब परलोक में निष्फल हैं, वह अन्धकार से प्रकटे हैं।

उत्पद्यन्ते च्यवन्ते च यान्यतोऽन्यानि कानिचित्
तान्यर्वाक्कालिकतया निष्फलान्यनृतानि च ॥

वेद से भिन्न जो कोई हैं, वह उत्पन्न होते हैं और गिरते हैं, वह अब किसी पुरुष से किये हुये होने से निष्फल हैं, क्योंकि झूठे हैं।

शब्दः स्पर्शश्च रूपञ्च रसो गन्धश्च पंचमः।
वेदादेव प्रसूयन्ते प्रसूतिर्गुणकर्मतः ॥

शब्द, स्पर्श, रूप रस और पांचवां गंध यह अपनी उत्पत्ति, गुण और कर्म द्वारा वेद से ही जाने जाते हैं।

बिभर्ति सर्वभूतानि वेदशास्त्रं सनातनम् ।
तस्मादेतत्परं मन्ये यज्जन्तोरस्य साधनम् ॥

सनातन वेद शास्त्र सारे भूतों का पालन पोषण करता है, इसलिए मैं इस को उत्तम मानता हूं, जोकि इस मनुष्य को (लोक परलोक) का साधन है।

वेदशास्त्रार्थतत्वज्ञो यत्र तत्राश्रमे वसन् ।
इहैव लोके तिष्ठन्स ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

वेद और शास्त्र के अर्थ के तत्व को जानने वाला जिस किसी आश्रम में रहता हुआ यहां पृथ्वी में रहता हुआ ही मुक्त होने के योग्य होता है।

तपो विद्या च विप्रस्य निःश्रेयसकरं परम् ।
तापसा किल्बिषं हन्ति विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥

तप और विद्या ब्राह्मण के लिये सर्वोत्तम मोक्ष साधन है तप से पाप को दूर करता है विद्या से मोक्ष लाभ करता है।

प्रत्यक्षं चानुमानं च शास्त्रं च विविधागमम् ।
त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीप्सता ॥

धर्म की शुद्धि चाहने वाले को प्रत्यक्ष, अनुमान और अनेक प्रकार का शास्त्र यह तीनों भली भान्ति जानने चाहियें।

आर्षं धर्मोपदेशं च वेद शास्त्राऽविरोधिना ।
यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मं वेद नेतरः ॥

वेद और धर्मोपदेश को वेद और शास्त्र के अविरोधी तर्क से जानता है वह धर्म को जानता है दूसरा नहीं।

एवं स भगवान्देवो लोकानां हितकाम्यया ।
धर्मस्य परमं गुह्यं ममेदं सर्वमुक्तवान् ॥

इस प्रकार भगवान् देव ने लोकों के हित की कामना से धर्म का यह सारा गुह्य भेद मुझे बतलाया।

सर्वमात्मनि संपश्येत्सच्चासच्च समाहितः ।
सर्वं ह्यात्मनि संपश्यन्ना धर्मे कुरुते मनः ॥

एकाग्र मन होकर सम्पूर्ण स्थूल सूक्ष्म को परमात्मा में देखे, क्योंकि सबको परमात्मा में देखता हुवा मन को अधर्म में नहीं लगाता है।

आत्मैव देवताः सर्वाः सर्वमात्मन्यवस्थितम् ।
आत्मा हि जनयत्येषां कर्मयोगं शरीरिणाम् ॥

परमात्मा ही सब देवता है, सब परमात्मा में स्थित है. परमात्मा ही उन देह धारियों के लिये कर्म योग को उत्पन्न करता है।

प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि ।
रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम् ॥

सब का शासन करने वाला, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, सोने की आभा वाला, केवल समाधि ज्ञान से जानने योग्य उस परम पुरुष को जाने।

एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम् ।
इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥

इसको कई अग्नि कहते हैं, दूसरे प्रजापति, कई इन्द्र दूसरे प्राण और कई सनातन ब्रह्म कहते हैं

एष सर्वाणि भूतानि पञ्चभिर्व्याप्य मूर्तिभिः ।
जन्मवृद्धिक्षयैर्नित्यं संसारयति चक्रवत् ॥

यह सब प्राणियों को पांचों भूतों के साथ लपेट कर जन्मवृद्धि और नाशके द्वारा सदा चक्रवत् घुमाता है।

एवं यः सर्वभूतेषु पश्यत्यात्मानमात्मना ।
स सर्वसमतामेत्य ब्रह्माभ्येति परं पदम् ॥

इस प्रकार जो आत्मा से परमात्मा को सब भूतों में देखता है, वह सब की समता को प्राप्त होकर ब्रह्म को प्राप्त होता है जो सब से ऊंचा पद है।

पुण्यश्लोक गोभक्तों से निवेदन

(ले० श्री० पं० गंगाप्रसादजी अग्निहोत्री, बलदेवबाग, जबलपुर)

गावः प्रतिष्ठा भूतानाम् (व्यासः)

इस समय भारत को सुखी और संपन्न बनाने के लिये जो उदार भारत वासी मनसा, वाचा कर्मणा उद्योग कर रहे हैं, वे सब के सब भारत की जनता के धन्यवाद-भाजन हैं। उनमें जो पुण्य श्लोक सज्जन भारतीय गोधन की रक्षा और उन्नति के लिये चेष्टा करते रहते हैं वे सर्व प्रथम वंदनीय और आदरणीय हैं। क्योंकि वे लोग उस काम को कर रहे हैं जिस से भारत के भारतीय लोगों का भारत में अस्तित्व बना रह सकता है। भारत वत्सल व्यास जी का यह वचन अक्षर अक्षर सत्य है कि भारत की जनता का अस्तित्व तभी तक रह सकता है जब तक भारत में भारत का गोधन बना हुआ है।

वे भारतीय धनवान् धन्य हैं जिन की कमाई का धन भारतीय गोधन की रक्षा में लगता रहता है। वे भारतीय पूज्य हैं जिन की विद्वत्ता गोधन के उचित परिपालन के उपायों को ढूंढ ढूंढ कर निकालती रहती है। वे भारतीय भारत के इतिहास में सर्वोच्च पद पायेंगे जो भारतीय गोधन के लिए गोचर भूमि प्राप्त करने में अहोरात्र कठिन परिश्रम करते रहते हैं। वे भारतीय प्रातःस्मरणीय हैं जो स्थान स्थान में पहुंच कर भारतीय समर्थ गोभक्तों का ध्यान उचित गोपरिपालन की आवश्यकता की ओर आकृष्ट करते रहते हैं। वे भारतीय निःसंदेह पुण्यश्लोक गोभक्त हैं जो शिखा सूत्रधारी गोभक्त जनता में गो साहित्य का प्रचार करने में यथा शक्ति धन लगाते रहते हैं।

इस समय जो शिखा सूत्रधारी गो भक्त सज्जन पिंजरापोलों और गोशालाओं के संचालन में लगे हुए हैं, उन के पीछे जो प्रतिवर्ष अपना निजका रुपया खर्च करते रहते हैं, उन की पवित्र सेवा में इस जन की यह विनीत प्रार्थना है कि वे लोग अब ऐसा प्रबंध करें जिस से न तो विकलांग गोवंशज प्राणियों को कसाई खाने में ही जाना पड़े और न उन की संस्थाओं में ही। उन की संस्थायें आदर्श गोशालाओं का पद पाकर सदा उस काम में लगी रहें जिस से भारत में गोवंश का सुधार और उत्कर्ष उत्तरोत्तर होता जाय।

पुण्य श्लोक गोभक्तों को यह पढ़ कर विशेष संतोष होगा कि मध्य प्रदेश की गोंदिया श्रीकृष्ण गोशाला के सुयो संचालक श्रीयुत अयोध्या प्रसाद जी महादेव प्रसाद जी तथा श्री० बाबू नंदराम जी

मंत्री ने गोंदिया के आस पास के किसानों में गोपरिपालन की शिक्षा का निरंतर प्रचार करते रहने का प्रबंध किया है। आप के इस प्रबंध से यह लाभ हो रहा है कि ग्रामीण किसानों तथा नागरिक गोभक्तों को उन की उन भूलों का ज्ञान होने लगा है जिनके कारण, उन के समर्थ होने पर भी उन का गोधन विकलांग और हीन काय हो कर कसाइयों के हाथ पड़ा करता है। श्रीयुत महादेवप्रसाद जी की कृपा से गोंदिया के आस पास के किसानों को अब यह बात ज्ञात हो गई है कि बड़े २ मूल्य देकर खरीदी हुई गौओं को दुधार बनाये रखने का यही उपाय है कि उन के लिए उच्च कुल संभूत लक्षण संपन्न सांड भी रक्खे जांय और उन का भरण पोषण यथा विधि किया जाय। प्रत्येक गांव के लोग जब अपने गांवमें लक्षण संपन्न सांड रखने लगेंगे अपनी गौओं को भर पेट चारा दाना खिलाने के लिये उन्हें अपने घर की खेती में पैदा करने लगेंगे, तब ग्रामीण किसानों के घर उन पयस्विनी गौओं की संख्या बढ़ेगी जिन के दर्शन श्री घनश्यामदास जी बिड़ला जैसे लक्ष्मी कृपापात्र भारतीय सज्जन पाश्चात्य जगत् के ग्रामों में स्वयं कर आये हैं। कहना नहीं होगा कि जब भारतीय किसानों को दुधार गौओं से खासी आय होने लगेगी, खेती के लिए घर पर बलवान् और दीर्घजीवी बैल पैदा होने लगेंगे, तब भारतीय किसान उन्हें बेचने की इच्छा ही नहीं करेंगे। इसका यह परिणाम अवश्यम्भावी होगा कि भारत में नरक का दृश्य दिखाने वाले, भारत की भूमि को कलंकित करने वाले, कसाई खाने धीरे धीरे, बंद होजांयगे। श्रीयुत महादेव प्रसाद जी की उक्त कार्यवाही से गोंदिया के आस पास के जो कसाईखाने बंद होंगे, उन का सब श्रेय और पुण्य आप को निःसंदेह मिलेगा। जिन लोगों के धन और परिश्रम से भारत में उक्त प्रकार गोवध के कसाईखाने बंद होंगे उन का धन और धर्म दोनों अनुकरणीय और आदरणीय होंगे। तात्पर्य एक स्थान में केवल पिंजरापोल वा गोशाला खोल देने से कसाईखाने बन्द नहीं किये जा सकते! कसाईखाने तभी बन्द हो सकते हैं जब गोशाला के मर्मज्ञ संचालक गण अपने पास पड़ोस के गावों के किसानों में गो परिपालन की शिक्षा का प्रचार यथेष्ट मात्रा में करेंगे। केवल स्थानिक लोगों के लिए दूध का प्रबन्ध करना गोरक्षा का गौण उद्देश्य है। उस का प्रधान उद्देश्य किसानों की गौओं को दुधार बनाना ही है।

बम्बई नगरी में गोग्रास की एक संस्था है। उस संस्था के संस्थापक और संचालक कर्मवीर पंडित माधव राव जी परम गोभक्त हैं। आप ने बम्बई के कई कर्म वीर भक्तों में उस गोभक्ति का प्रगाढ़ प्रेम भर दिया है जिस के सहारे वे लोग, उस संस्था के संचालनार्थ स्वयं सेवकों का काम कर धन एकत्र करते रहते हैं। उस धन से उक्त संस्था की गौओं का परिपालन किया जाता है। कसाइयों के हाथों में फंसे हुए गोवंशज प्राणियों की प्राण रक्षा की जाती है और मराठी, गुजराती तथा हिन्दी भाषा में "गोग्रास" नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकाला जाता है।

श्री पंडित माधवराव जी ने उचित और अनुचित गोपालन के परिणाम दर्शक चित्रपट बनवा लिए हैं। उन की सहायता से (मैजिक लेनटर्न द्वारा) जब वे अपने श्रोताओं पर गोपरिपालन की शिक्षा के प्रचार की आवश्यकता प्रकट करते हैं तब उसका ग्रामीण किसानों पर खासा प्रभाव पड़ता है। उनकी इस यथार्थ गोसेवा से प्रसन्न

हो कर बम्बई की सरकार ने उन्हें तदर्थ वार्षिक आर्थिक सहायता देना आरम्भ कर दिया है। क्या हिंदी भाषाभाषी भारत के डिस्ट्रिक्टबोर्डों, लोकल बोर्डों और कोआपरेटिव सोसायटियों के शिक्षा सूत्रधारी सदस्य और पदाधिकारीगण, बम्बई सरकार की उक्त गोपरिपालन प्रियता से कुछ शिक्षा ग्रहण कर उसका अनुकरण करेंगे ?

उक्त संक्षिप्त निवेदन को पढ़ हिंदी भाषा भाषी गोभक्तगण स्वयं जान सकते हैं, कि यथार्थ गोरक्षा का आरम्भ करने के लिए अभी उन्हें और क्या २ करना आवश्यक है।

विनय

[ले० मुरारी शर्मा "अभय"।]

(१)

हे देव ! दया दीनों पर कर, भव-दुःखों से उद्धार करो।
हम दीन, मलीन, अधीन पड़े, निज सेवक जान सुधार करो॥
तुम स्वामी हो हम सेवक हैं, इस नातेसे तो प्यार करो।
सदियों से सहते कष्ट अमित, अब तो विन्ती स्वीकार करो॥

(२)

माना हम सेवा विमुख हुये, औ पाते कष्ट तभी भारी।
तव चरणों में मन मस्त नहीं, हों कैसे सुखके अधिकारी॥
पर क्या तुम भी प्रण भूल गये ? जो किया आपने अविकारी।
दीनों के भव-दुःख हरन हेतु, बन जाते हो तुम तन-धारी॥

(३)

क्या समय अभी वह नहीं आया ? जब दीनों का दुःख दूर करो।
औ दुःखी जनों का हृदय भी, निज भक्ति से भरपूर करो॥
हो 'अभय' विनय फिर करते हैं, हम दीनों के अपनाने की।
कर दया दयामय दमन करो, यह नीति हमें कलपाने की॥

भगवन्नाम सार है

[ले० श्री० भोला बाबा अनूपशहर]

श्री पूज्य स्वामी विद्यानन्दजी उपनाम श्री भोले बाबा जी (प्रसिद्ध वेदान्त केसरी के भूत पूर्व सम्पादक पं० शंकर लालजी कौशल्य, जिन्होंने अब संन्यासाश्रम ग्रहण कर लिया है) ने 'भक्ति' के पाठकों के लिये अत्यन्त दया करके यह लेख भेजा है और आगे भी सर्वदा इसी प्रकार से कृपा करते रहेंगे। आशा है कि भक्तिके पाठक स्वामी जी के उपदेश पूर्ण निबन्धों से लाभ उठायेंगे।

(सम्पादक)

छप्पय

जय २ हनुमत वीर, धीर ज्ञानी विज्ञानी।
धनुर्धारी प्रभु भक्त, भक्ति भगवत् के दानी।
राम २ रट नाए, राम ऐं प्रेम बढ़ाया।
रोम २ में राम, नाम अंकित दिखलाया॥
'भोला' के प्रिय इष्टतम, भक्तिदान प्रभु दीजिये
दानी परम कहाय के मती कृपणता कीजिये

संसार असार है, भगवन्नाम सार है। संसार आगमापायी है, भगवन्नाम चिरस्थाई है। संसार दुःखों का घर है, भगवन्नाम सुख का सागर है। संसार धूल है। भगवन्नाम मणि अमूल्य है। संसार खाई है, कूप है, भगवन्नाम कामदुघा गाई है, अनूप है। संसार शोक मोह से युक्त है, भगवन्नाम मोद प्रमोद संयुक्त है! संसार घोर अंधियारा है, भगवन्नाम भक्क उजियारा है! संसार दुष्कृतियों का बंदीखाना है, भगवन्नाम सुकृतियों का महल सुहाना है। संसार रोगियों का अस्पताल कुष्टादि से पूर्ण है, भगवन्नाम योगियों का परमाधार तुलसादि से परिपूर्ण है! संसार विषयासक्तों को मारने वाला है। भगवन्नाम भक्तों को तारने वाला है। संसार अज्ञानियों को अनेक योनियों में घुमाता है, भगवन्नाम ज्ञानियों को ध्रुव निश्चल तत्व दिखलाता है! जो भगवत् हैं, सो ही भगवन्नाम है, कुछ भी नहीं भेद है, जो नाम है सो ही नामी है, इस में प्रमाण वेद है! जब २ भगवत् का अवतार होता है, वेद भी भगवत् के साथ अवतार लेते हैं; जब भगवत् दशरथ नंदन रूप से कौशल्या जी से प्रकट हुए थे, वेद वाल्मीकि द्वारा रामायण रूप में सब के दृष्टिगोचर हुए थे। अब भी हो रहे हैं; हनुमान जी धनुषधारी भगवान् के परम प्रिय सेवक हैं, इनके द्वारा भगवद्भक्तों को भगवद्भक्ति और भगवत् की प्राप्ति होती है! जो कोई भगवत् के राम नाम का जाप और हनुमान जी का ध्यान करता है, उसको बहुत शीघ्र ही भगवान् का दर्शन होता है और वह भगवत् के नित्य धाम को प्राप्त करके हमेशा के लिये सुखी होता है, इस में किसी प्रकार का संशय नहीं है!

ऊपर के वाक्य हनुमान गढ़ी के मन्दिर में एक पत्थर पर बड़े २ मोटे अक्षरों में खुदे हुये देख कर अयोध्या पुरी में रहने वाला भगतराम नाम का एक ब्राह्मण इस प्रकार विचार करने लगा:-

ओहो! भगवन्नाम के जप का और हनुमान जी के ध्यान का यह प्रभाव! अपूर्व प्रभाव! बचपन से मैं यहां आया करता हूं, अब तक मुझे यह ध्यान कभी नहीं आया रोज मंदिर में आता हूं, बाहर के

आये हुये यात्रियों को हनुमान जी के दर्शन कराता हूं, अन्य भी भगवत् के विहार स्थान दिखाता हूं, पैसों के लालच से यात्रियों के पीछे २ दीन हुआ फिरता हूं, पुजारियों की खुशामदें किया करता हूं, कोई यात्री दो चार आने दे जाता है, कोई धेला पैसा ही देकर टाल देता है, यात्रियों के पीछे लगता हूं तो वे मुझे घृणा-युक्त दृष्टि से देखते हैं मुझे साथ लेना नहीं चाहते, हैं, फिर भी मैं धन के लोभ से पीछे लग ही लेता हूं, कुत्ते के समान पीछे २ फिरता हूं ! मिलता क्या है ? पेट को मिल गया तो तन नंगा, तन ढक गया तो पेट खाली ! पुजारी कभी २ किंचित् मिठाई दे देते हैं, कभी कभी वे भी हंस कर निरादर सा करके टाल देते हैं। धिक्कार है मेरी वृत्तिको ! दो बच्चे थे जाते रहे, स्त्री भी मुझे अकेला छोड़ कर हमेशा के लिये चल बसी ! अकेला रह गया हूं, आगे नाथ न पीछे पथा ! फिर भी दीन दुखी हूं, जने २ के सामने दीन होता हूं, परमेश्वर के संमुख दीन होता तो बेड़ा पार हो जाता ! भगवान् का वचन है:-

सन्मुख जीव होय मम जब ही ।
जन्म कोटि अघ नाशों तब ही ॥

इन बातों पर मैं ध्यान नहीं देता। कैसा मूर्ख हूं। कुआ चलाने वालों के मुख से सुना करता हूं:-

राम भजन करि गाढ़ो ।
तुहि धूप लगे ना जाड़ो ॥

इन वाक्यों को सुन कर भी चेतता नहीं हूं, इस कान से सुनता हूं, उस कान से निकाल देता हूं। कान होते हुये भी बहिरा और आंख होते हुये भी अंधा हो रहा हूं ! रोज सब को मरते देखता हूं, फिर भी अपने को अमर समझता हूं। इस पत्थर पर मेरी दृष्टि ही नहीं जाती थी। जाती कहां से ? लोभ ने आंखें ढक रक्खी थीं ! लोभ बुरी बला है, अच्छे २ विद्वानों, कवियों और शूरवीरों की आंखों पर पट्टी चढ़ा कर अंधा करके ठोकरें देकर उनकी जगत् में हंसी कराता है ! कंचन को देख कर बड़े बड़ों की आंखों के सामने चकाचौंध आजाता है, कुछ नहीं सूझता अर्थ अनर्थ नहीं दीखता, करने का काम हो या न हो कर ही बैठते हैं ! जिस को जैसा सूझे वैसा करो मुझे क्या ? औरों के लिये मैं क्या रोऊं? अपने उद्धार का उपाय मुझे करना चाहिये ! आज भगवत् का मुझ पर परम अनुग्रह है ! जो मुझ में ऐसी बुद्धि उत्पन्न हुई है। बीती का सोच करना व्यर्थ है आगे की चिंता करनी चाहिये ! आज से मैं किसी के सामने दीन नहीं होऊंगा, यह निन्दित वृत्ति भी अब नहीं करूंगा, राम नाम में लौ लगाऊंगा, और हनुमान जी का ध्यान प्रेम पूर्वक किया करूंगा ! भगवद्भक्तों द्वारा भगवत् की प्राप्ति होती है उन्हीं का संग किया करूंगा।

सर्जूप्रसाद नाम के एक परम भगवद्भक्त बूढ़े पंडित जी से भगतराम का परिचय था, उनके पास जाकर प्रणाम करके एकांत में अपना ऊपर का सब विचार सुना कर कहने लगा:-

भगतराम:-पंडित जी ! बालकपन में मैंने थोड़ी सी संस्कृत पढ़ी थी अब तो सब भूल भाल गया, हिन्दी कुछ२ बांच सक्ता हूं, वाल्मीकि रामायण तो मैं पढ नहीं सक्ता दशरथ नंदन के चरित्र पढना चाहता हूं। मुझे कौनसा ग्रंथ देखना चाहिये ! कृपा करके बताइये, आप में मेरी पूर्ण श्रद्धा है जो कुछ आप आज्ञा दें करने को तैयार हूं।

पंडित जी: भाई ! वाल्मीकि रामायण नहीं पढ सकता तो न सही गोसांई जी कृत रामायण का पाठ तेरे लिये बहुत ही उपयोगी होगा ! वाल्मीकि

रामायण त्रेता में लिखी गई थी, उस समय के मनुष्यों की बुद्धियां शुद्ध थी, भगवान् का किंचित् ऐश्वर्य देखकर ही वे लोग भगवान् के पूर्ण ऐश्वर्य को समझ सक्ते थे। आजकल के मनुष्यों की इतनी शुद्ध और तीव्र बुद्धि नहीं है कि थोड़ा बताने से ही भगवान् के गूढ़ चरित्रों को समझ सकें। गोसाईंजी ने भगवान् के ऐश्वर्य को बहुत विस्तार करके सरल रीति से समझाया है और अनेक युक्तियों से भगवत् की लीलाओं का रहस्य बतलाया है इसलिये आजकल के लोगों को तुलसीकृत रामायण बहुत ही उपयोगी और संसार समुद्र से उद्धार करने वाली है! चारों वेद, छैओं शास्त्र, अठारह पुराण, अठारह उप पुराण, धर्म शास्त्र और नीति शास्त्र रामायण में भर दिया है, जैसे समुद्र में स्नान करने से सब तीर्थों के स्नान का फल हो जाता है इसी प्रकार रामायण का पाठ करने से सब शास्त्रों के पढ़ने का फल प्राप्त होता है। उसी का तू नित्य प्रति पाठ किया कर! भगवत् ने चाहा तो तेरा अंतःकरण थोड़े काल में ही शुद्ध हो जायगा और तू अन्य ग्रंथों को भी समझने लगेगा और तेरा शीघ्र ही कल्याण होगा! जो कोई बात तेरी समझ में न आवे, मुझ से पूछ जाया कीजियो! अच्छा जा! हनुमान जी तेरे हृदय में वास करें और तुझे भगवत् की प्राप्ति हो!

इतना सुन कर भगतराम घर चला आया, पूर्व वृत्ति का उसने त्याग कर दिया. पच्चीस तीस घरों से आधी २ चुकटी आटा करके दो रुपये भर राम रस और आठ सात कण्डे मांग लाया करे, पांच बाटियां बना कर कण्डों की आग में दाब दिया करे, पांच चार घंटे में जब बाटियां खूब सिक कर ठण्डी हो जाया करें, निकाल कर एक बाटी बंदरों को डाल दिया करे और चार आप हनुमान जी की प्रसादी मान कर पालिया करे. उठते बैठते राम नाम का जाप किया करे, प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त्त में हनुमान जी का ध्यान, और शेष समय में रामायण का उत्साह पूर्वक पाठ किया करे! इस प्रकार नियम पूर्वक करने लगा।

भगवन्नाम का जप करने से भगतराम का प्राणापान शनैः २ समान होने लगा, अस्थिर मन में स्थिरता आने लगी! हनुमान जी का ध्यान करने से कामादि राक्षस बुद्धि रूपी गुफा में से भागने लगे! भला - जिन्होंने लंका दाह के समय महान् २ राक्षसों को हाथों से ही कुचल मसल डाला था, ऐसे समर्थ का जिस के हृदय में वास हो वहां कामादिक कैसे ठहर सक्ते हैं! एक २ कान दबा २ कर बाहर जाने लगे! रामायण का पाठ करते समय जब भगवत् और भगवद्भक्तों के अपूर्व गुणों का प्रसंग आवे, भगतराम की आंखों में से प्रेम के आंसुओं की झड़ी लग जाय, ऐसा होने से उसके हृदय के सूक्ष्म से सूक्ष्म दोष धुलने से हृदय स्वच्छ और निर्मल होने लगा! सूक्ष्म शरीर का प्रभाव स्थूल शरीर पर भी पड़ता है, भगतराम का काया पलट हो गया. शरीर की कान्ति ही बदल गई! माथा चमकने लगा. जो कोई देखे स्वाभाविक ही झुक जाय, प्रणाम करने लगे! आधी चुकटी आटा मांगे तो पूरा सीधा देने को लोग तैयार हो जांय! परंतु वीर भगतराम संतोष का त्याग न करे, वह ही आधी चुटकी आटा ले, अधिक कभी न ले. नियम से भगवत्परायण रहे! सुखियों को देख कर प्रसन्न हुआ करे, किसी से राग द्वेष, ईर्षा न करे, सब में समान दृष्टि रक्खे! प्राप्ति अप्राप्ति में हर्ष शोक न करे, लाभ हानि में समान रहे सब को भगवत् रूप समझे! काम क्रोधादिक को पास फटकने न दे! जब

देखो तब प्रसन्न मुख ? कोई २ चुटकी मांगते समय हास्य से अथवा यथार्थ में अनुचित बात कहदे तो उस पर ध्यान न दे ! जो कुछ हो रहा है भगवन् की तरफ से अथवा मेरे पुण्य पाप से होरहा है, तो मैं कोप क्यों करूं, ऐसा समझ कर शांत रहे। कानों से भगवत् चरित्र सुने, आंखों से सब में भगवद्गुण देखे खाना पीना, चलना फिरना आदि सब व्यापार भगवत् प्रसन्नता के हेतु करे, जब ध्यान करने बैठे तो सब बाह्य विषयों का ध्यान छोड़ कर सर्व संकल्पों का त्याग करके लाल लंगोटा वाले, हाथ में डंडा लिये हुये, सुवर्ण समान दिव्य कान्तिमान दुष्टदल भंजक, भक्तचित्त-रंजक, शिवावतार, अंजनी कुमार, केशरी-नंदन, पाप निकंदन, उर्ध्व रेता, ब्रह्म तत्व वेत्ता, पवन सुत, कीर्ति अद्भुत का एकाग्र चित्त होकर ध्यान करे। ध्यान में जिस सुख का उसको अनुभव होता था उसको तो कोई धर्म योगी ही जान सक्ता है ! हम सरीखे कलियुगी क्षुद्र प्राणी, कुल, गोत्र, लौकिक विद्या के अभिमानी, मात्र पेट पात्र के भरने वाले कूकर, सुख दार में ही प्रीति करने वाले चाकर, ऐश्वर्य के लिये दूसरों की गुलामी करने वाले अथवा नामता कि लिये मरने वाले, तो उस सुख के कण मात्र का अनुमान भी नहीं कर सकते ! जिसका अनुमान ही नहीं कर सक्ते, उसका कथन तो हो ही कहां से ? जो अमृत का पान करता है वह ही उसका स्वाद जानता है, उस सुख का प्रत्यक्ष तो भगवत् आराम भगतरामको ही होता था।

इस प्रकार करते २ भगतराम का अंतःकरण परम शुद्ध और निर्मल हो गया। जब हनुमान जी ने देखा कि हमारा भक्त अब भगवत् दर्शन के योग्य हो गया है, तो भगवत् का दर्शन कराने के लिए जैसे वे लंका को जला कर अथवा यों कहो कि लंका को दिव्य बनाकर, क्योंकि सुवर्ण जलता तो है नहीं तपने से उसकी कान्ति दूनी बढ़ जाती है, रघुनाथ जी के पास आ गए थे, इसी प्रकार अपने भक्त का हृदय शुद्ध करके हनुमान जी उस के हृदय से भाग गए और कदली वन में यथा पूर्व विहार करने लगे !

अब भगतराम घबराया, दौड़ा हुआ अपने गुरु पंडित सर्जूप्रसाद के पास गया और उन से सब वृत्तांत कहा। पण्डित जी भगवत् तत्व के ज्ञाता थे ही, भगतराम भी अब भगवत् तत्व का साक्षात्कार करने का पूर्ण अधिकारी हो गया था। बिना अधिकारी के कोई वस्तु प्राप्त नहीं होती। पण्डित जी ने रामायण की चौपाई सुना २ कर भगवत् के लीला स्वरूप और नित्य स्वरूप दोनों को भली प्रकार से समझ कर उसे संतुष्ट कर दिया ! उस दिन से भगतराम सचमुच भगतराम अथवा भक्तराम हो गया। और भगवत् के नित्य स्वरूप का अनुसंधान करता हुआ, अंत में हमेशा के लिए सुखी हुवा, इत्यलं शोभनम् !

पाठक ! अब हम इस समय आप से विशेष कहना नहीं चाहते, दो बातें और कह कर आप से विदा चाहते हैं। कोई २ ऐसी शंका करते हैं कि हनुमान जी क्रूर स्वभाव वाले हैं, उनका ध्यान करने से मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है और अन्य मतावलम्बी भी बहुत से ऐसा आक्षेप करते हैं कि, क्रूर देव का ध्यान करना उचित नहीं। इन लोगों का यह कथन समीचीन नहीं है। देवता चाहे क्रूर हो चाहे सौम्य हो, तुम्हारी भावनानुसार फल देता है। सकाम उपासक को विघ्न का संभव है, निष्काम उपासक को किसी प्रकार भी विघ्न की संभावना नहीं है। अमृत से

तो विष की निवृत्ति होती ही है, विष से भी विष की निवृत्तिहोती है। बिल्ली के दांत चूहे के लिए तीक्ष्ण और अपने बच्चे के लिए कोमल होते हैं। इसी प्रकार क्रूर देव अपने भक्त के शत्रुओं के लिए क्रूर होता है और भक्त के लिए परम सौम्य होता है। नृसिंह भगवान् अन्य दैत्यों के लिए उग्र रूप वाले और प्रल्हाद के लिए सौम्य स्वरूप थे। इस निष्काम भाव से भगवत् की प्राप्ति के लिऐ चाहे जिस देवता का आप ध्यान कर सकते हैं। भगवत् स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म है और दुर्विज्ञेय है, जब तक जानने में न आवे तब तक ईश्वरावतार अथवा वीतराग पुरुष का ध्यान ही करना होता है। इसी प्रकार नाम भी सब भगवत् के ही हैं किंतु जिस रुपये पर राजा की छाप होती है वह ही चलता है इसी प्रकार छाप वाले नाम ही उपयोगी हैं, जिस नाम पर भगवत् अथवा भगवद्भक्तों की छाप हो, उन्हीं का जाप करना चाहिये। इन में से भी जो नाम अपने को इष्टतम हो, वह ही नाम सर्वोत्तम है। उसी से भगवत् की प्राप्ति हो सकती है। अंत में कहना यह ही है कि संसार असार है और भगवन्नाम सार है!

दो०—भगवन्नाम ही सार है यह संसार असार
भोला! भगवन्नाम जप जो चाहे उद्धार

बोलो! प्रेम से कौशल्या दशरथ नंदन धनुषधारी भगवान् की जय!

भक्तों के चरित्र।

सदन कंसाई।

भगवान् संतप्त हृदय प्राणियों पर जब अपनी अमृत रूपी भक्ति की वर्षा करते हैं तो कुछ विलक्षण ढंग में करते हैं। जैसे वह अनोखे और अनूठे हैं वैसी ही उनकी लीलाएं भी अनोखी हैं, उनको समझनेमें कौन समर्थ है? भगवान की बातें साधारण समझ बूझ से ऊपर हैं। बुद्धि वहां काम नहीं देती। भगवान् की लीलाएं और घटनाएं देश, काल और वस्तु से ऊपर होती हैं। बुद्धि में रत रहने वाले सांसारिक, दृष्टि रखने वाले, प्रकृति से सीमा बद्ध हुए प्राणी यह क्यों हुआ, कैसे हुआ, इससे क्या लाभ है? इन बातों में अटक जाते हैं और भगवान् को जो करना होता है वह आनकी आन में कर डालते हैं। उसकी सत्ता की सीमा नहीं है, वह नियम के बन्धन में नहीं है। वह जो कुछ करता है वह आप नियम है। सन्त कहते हैं:-

प्रभु चाहे सोई करे, याकूं टोके कौन।
देख २ अचरज रहा, चरणदास गहे मौन॥
अनहोनी प्रभु कर सके, होन हार मिट जाय
तुलसी रघुपति राम ते, काहू की न बसाय॥

सुई के नाके हस्ती काढ़े,
मूल पात बिन लकड़ी बाढ़े।

समुद्र की जगह पहाड़ और पहाड़ की जगह

समुद्र बना देना, उसके लिए क्षण मात्र की बात है। अधिक क्या कहें वह संकल्प मात्र से सृष्टि की रचना करता है और दृष्टि मात्र से प्रलय कर डालता है। सदन कसाई का भक्त होना भी उसकी एक आश्चर्य जनक लीला है। साधारण मनुष्य इस बात को किस तरह ठीक मान सकते हैं कि, एक आदमी मांस बेचता हुआ भगवान का भक्त बन सकता है। कर्म्म के ख्याल से और वर्ण के लिहाज़ से किसी तरह भी समझ में नहीं आता कि, सदन किस तरह भक्त समझा गया। परंतु बात यह है कि भक्ति का आधार कर्म्मधर्म्म और वर्णाश्रम धर्म नहीं है भक्त कर्म्म और वर्ण से ऊपर होता है। वह तो प्रेमी व दीवाना होता है। वह तो विश्वास की मूर्ति होता है। भक्त का विश्वास पहाड़ को पानी करके पिघलाने में समर्थ होता है। वह विश्वास पर मर मिटने वाला होता है। उसकी शक्ति की कोई सीमा नहीं है।

सदन जी जाति के कसाई थे और मांस बेचने का पेशा करते थे। दूसरे कसाइयों से मांस लाकर बेच दिया करते थे। इनके पास सालिगराम जी की एक मूर्ति थी। उससे वह बट्टे का काम लेते थे जो कोई मांस लेने आता था उस मूर्ति से मांस तोल दिया करते थे। चाहे कोई =) आने का मांस लेवे या दो रुपये का। सब के लिए यही एक बट्टा था। वह भगवान के विश्वास पर रहते थे, हानि लाभ से ऊपर रहते थे। भक्तों का व्यवहार भी अजीब है वह किसी की क्या समझ में आवे ?

एक दिन किसी साधु की दृष्टि सालिगराम की मूर्ति पर पड़ी। उसने अपने मन में कहा "राम राम, यह कसाई सालिग्राम की मूर्ति से मांस तोलता है। क्या अच्छा होता यदि यह मूर्ति मुझे मिल जाती! यह सोच कर साधु सदन जी के पास गया और सालिगराम की मूर्ति मांगी। उन्होंने कहा यदि आपको इससे सच्चा प्रेम है तो लेजाइए और सेवा कीजिए।

वह सालिगराम को लाया। गर्म पानी से स्नान कराया, रक्त के धब्बे धोए फूल चन्दन और तुलसी के पत्ते 'चढ़ाए' और पूजा करने के पश्चात् एक स्वच्छ व सुन्दर बटुए में बन्द करके रख दिया। रात को उसे स्वप्न हुआ कि साधु जहां से मुझे लाया है शीघ्र ही वहां पहुंचा दे, नहीं तो तेरी कुशल नहीं है।, उसी स्वप्न में साधु ने उत्तर दिया कि भगवन् वह स्थान आपके लिए ठीक नहीं है। वहां रक्त व मांस का व्यवहार है। आपको तो भक्तों के हां रहना चाहिए। मूर्ति ने कहा तुझे भक्तों का क्या ज्ञान है ? तू क्या जानता है कि कौन भक्त है और कौन नहीं है ? सदन मेरा सच्चा भक्त है। वह मुझे प्यार करता है, मैं उसे प्यार करता हूं। तूने नहीं देखा! उसे मुझ पर इतना विश्वास है कि थोड़ा या बहुत सब मुझ से तोला करता है। उसकी मोल तोल की बातों को मैं भजन और कीर्तन समझता हूं। उसके तराज़ू का पलड़ा मेरा झूला है।

साधु प्रातःकाल उठा और कसाई की दूकान पर पहुंचा और कहा भाई सदन! अपनी मूर्ति लो, यह फल फूल तुलसी दल और चन्दन इत्यादि से प्रसन्न नहीं होते। यह तुम्हारे ही पास रक्त मांस में रहना चाहते हैं। मुझे रात में धमकाया भी है कि, मुझे सदन के पहुंचाओ वरना कुशल नहीं है। सदन जी ने मूर्ति लेली और प्रेम में मग्न होगए। चुपके से उसे साथ लेकर जगन्नाथ जी की तरफ चल दिए। वह सड़क छोड़ कर पगडण्डी के रास्ते गए।

सदन जी बहुत ही सुन्दर थे, रास्ते में किसी गृहस्थ के घर खाने पीने को ठैर गए। उस गृहस्थ की स्त्री ने इनके रूप को देखा और वह इनपर मोहित हो गई। उसने इनको प्रेम से भोजन कराया और अंत में बोली कि मैं तुम्हारे साथ चलना चाहती हूं। सदन जी ने उत्तर दिया कि माई मैं किसी पति वाली स्त्री से सम्बन्ध रखना नहीं चाहता। इस दुष्टा ने यह सोचा कि यदि मैं अपने पति को मारडालूं तो यह मुझे साथ में रखलेंगे। यह सोच कर रात में उसने अपने पति को मार डाला और सदन जी के पास आकर कहने लगी "अब तुम मुझे अपनी सेवा में स्वीकार करो, मैंने अपने पति को मार डाला है, अब कोई भय भी नहीं रहा। सदन जी ने उसे बहुत कुछ बुरा भला कहा और वहां से चल देना मुनासिब समझा।

स्त्री उसी समय रोने और चिल्लाने लगी "मैं ने इस पथिक को साधु समझ कर घर में ठहराया था। इसने मेरे पति को मार डाला और मुझ को बलात्कार से लेजाना चाहता है। इसका विलाप सुन कर अड़ोसी पड़ोसी दौड़े। उन्होंने सदन जी को बान्ध लिया और दूसरे दिन हाकिम के पास लेगए। उसने इन से पूछा क्या स्त्री सच कहती है? उन्होंने उत्तर दिया सच कहती है, मैं अपराधी हूं। हाकिम ने दोनों हाथ कटवा कर इन्हें छोड़ दिया। यह मन में बहुत ही प्रसन्न हुए और सोचने लगे "किसी बड़े पाप कर्म्म का यह दण्ड मिला है, मालिक जो करता है अच्छा ही करता है। इसी में मेरा कल्याण है।

यह सोचते हुए वह जगन्नाथ जी में पहुंचे रात के समय पुजारियों को स्वप्न हुआ "मेरा हाथ कटा भक्त दूर से आरहा है, उसे पालकी पर मेरे पास लाओ"। वह पालकी लाए और बहुत कहने सुनने पर वह चढ़कर मन्दिर में आए।

दर्शन करते ही प्रेम में मग्न होगए। कुछ देरी बाद जब आखें खोलीं तो देखते क्या हैं कि, दोनों हाथ ठीक हैं। यह लीला देखकर सब लोग आश्चर्य करने लगे। उस दिन से सदन जी की गणना सच्चे भक्तों में होने लगी सब उनका आदर मान करने लगे।

जात पात पूछे ना कोई।
हरको भजे सो हर का होई॥

प्रेमी ग्राहकों से निवेदन

१. अबकी बार श्रावण दो हैं। यह प्रथम श्रावण का ११ वा अंक आपकी सेवा में उपस्थित है ही। १२ वां अंक सर्वदा की भान्ति भाद्रपद की पूर्णिमा पर पाठकों की सेवा में प्रेषित किया जायगा इस हेतु पुरुषोत्तम मास में "भक्ति" प्रकाशित नहीं होगी। प्रेमी पाठक धैर्य रक्खें।

२. यद्यपि "भक्ति" का परिवार पर्याप्त संख्या में नहीं है तथापि अबकी बार तृतीय वर्ष का प्रथमांक विशेषांक के रूपमें ८० पृष्ठों का निकालने का विचार किया गया है। इस का नाम "भगवद्भक्तांक" होगा। इसमें प्रसिद्ध २ लेखकों के लेख मंगाने का प्रबन्ध किया गया है। मूल्य डाक व्यय सहित ॥=) रजिष्ट्री से मंगाने वालों को =) के टिकट भेजने चाहियें। ग्राहकों से अथवा ग्राहक बनने वालों से अलग दाम नहीं। अतः शीघ्र २) का मनिआर्डर भेज कर ग्राहकों में नाम दर्ज कराइये।

३. भक्ति के ग्राहकों से निवेदन है कि वह भक्ति के परिवार के बढ़ाने का प्रयत्न करें। अतः भक्ति के नये वर्ष की खुशी में प्रत्येक को प्रयत्न करके कम से कम दो दो ग्राहक और बना देने चाहियें। यदि प्रेमी पाठक मन लगा कर प्रयत्न करें तो उनके लिये दो दो ग्राहक और बना देना कोई कठिन बात नहीं है।

(सम्पादक)

भजन।

राग जैतश्री १

मनरे सांचा गहो विचारा।
राम नाम बिन मिथ्या मानो, सगरो यह संसारा
जाको योगी खोजत हारे, पायो नहीं निहिं पारा
सो स्वामी तुम निकट पिछानो, रूप रेखते न्यारा
पावन नाम जगत् में हरि को, कबहुं नाहिं संभारा
नानक शरण परयो जग वन्दन, राखो विरद विहारा

राग धनाश्री २

साधो यह जग भर्म भुलाना।
राम नाम का सिमरन छोड्या,
माया हाथ बिकाना ॥ १ ॥
मात पिता भाई सुत बनिता,
ताके रस लिपटाना ॥ २ ॥
यौवन धन प्रभुता के मद में,
अह निश रहे दिवाना ॥ ३ ॥
दीन दयाल सदा दुःख भंजन,
तासों मन न लगाना ॥ ४ ॥
जन नानक कोटिन में किनहुं,
गुरु मुख होय पछाना ॥ ५ ॥

राग धनाश्री ३

दिनते पहर पहरते घड़ियां आयु घटे तन छीजै
काल अहेरी फिरे बधिक ज्यों कहो कवन विधि कीजै
जब लग ज्योति काया में बरतें आपा पशू न बूझै
लालच करे जीवन पद कारन लोचन कछू न सूझै
कहत कबीर सुनोरे प्राणी छोड़ो मन के भरमा
केवल नाम जपो हे प्राणी! परो एक की शरणा

राग सोरठ ४

मन रे गह्यो न गुरु उपदेश।
कहा भयो जो मूंड मुड़ायो,
भगवों कीनो भेष।
सांच छाड़ कै झूंठहिं लाग्यो,
जन्म अकारथ खोयो।
कर परपंच उदर निज पोष्यो,
पशु की नाईं सोयो ॥
राम भजन की गति नहिं जानी,
माया हाथ बिकाना।
उरझ रह्यो विषयन संग बौरा,
नाम रत्न बिसराना ॥
रह्यो अचेत न चेत्यो गोविंद,
विरथा औध सिरानी।
कहै नानक हरि बिरद पिछानो,
भूले सदा पिरानी ॥

राग सोरठ ५

प्राणी कौन उपाव करै।
जातै भगति राम की पावै, यम को त्रास हरै।
कौन कर्म विद्या कह कैसी, धर्म कौन पुनि करई

कौन नाम गुरु जाके सुमिरे, भव सागर को तरई
कलि में एक नाम किरपा निधि जाहि जपै गति पावै
और धर्म ताके सम नाहिन, यह विधि वेद बतावै
सुख दुःख रहत सदा निरलेपी, जाको कहत गुसांई
सो तुमही में बसै निरन्तर, नानक दर्पण न्याई

राग देवगंधार ६

प्रभु जी यही मनोरथ मेरा ।
कृपा निधान दयाल मोहि दीजै,
कर सन्तन का चेरा ॥
प्रातहि काल लागो जन चरनी,
निशि बासर दर्शन पावों ।
तन मन अर्प करों जन सेवा,
रसना हरि गुण गाओं ॥
सांस सांस सुमिरों प्रभु अपना,
सन्त संग नित रहिये ।
एक अधार नाम धन मोरा ।
आनन्द नानक यह लहिये ॥

राग गोरी ७

माधो हरि हरि हरि मुख कहिये ।
हमते कछु न होवै स्वामी, ज्यों राखो त्यों रहिये
क्या कछु करे कि करने हारा, क्या इस हाथ विचारे
जित तुम लावो तित ही लागा, तित ही पूरण खसम हमारे
करहु कृपा सब के दाते, एक रूप लव लाइहु
नानक की विनती हरि पै, अपना नाम जपावहु

राग गोरी ८

साधो रचना राम बनाई ॥
इक विनशे इक अस्थिर माने,
अचरज लख्यो न जाई ।
काम क्रोध मोह वश प्रानी,
हरि मूरति बिसराई ॥
झूठा तन साचा कर मान्यो,
ज्यों सुपना रैनाई ।
जो दीसे सो सकल विनाशे,
ज्यों बादर की छाई ।
जन नानक जग जानो मिथ्या,
रहो राम शरनाई ॥

राग आसा ६

प्रभु को सुमिर सुमिर मन मेरे,
पाप कटें सब तेरे ।
नाम दान असनान निरार्थ,
जब प्रीत नहीं मन तेरे ॥
जात पात की बात न पूछें,
पूछ काज भलेरे ।
जिन करतार अकाल पिछाना,
सोई जात उचेरे ॥
दो दिन के सुख कारण मूरख,
पावत उमर बखेरे ।
गंग यमुन काशी बन जंगल,
हरि घट मों हरि नेरे ॥
पर जो उसको ढूंढन जावत,
ऊजड़ फिरत अंधेरे ।
सांच त्याग मिथ्या जिन पकड़ी,
अति बन दुःख सहेरे ।
खालिस जिन भगवान पिछाना,
हम तिनके हैं चेरे ।

भक्ति के संरक्षक

१. राय बहादुर ला० सेवकराम जी एम. एल. सी, बार-ऐट-लौ लाहौर १२५)
२. भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी १११)
३. राय साहब श्री. बल्लभ प्रसाद जी रईस आनरेरी मजिस्ट्रेट पटना १०१)
४. राय बहादुर ला० बनारसीदास जी रईस, मिल ओनर अम्बाला १०१)
५. श्रीमान् भाई नारायण सिंह जी हीरामण्डी लाहौर १०१)
६. राव बहादुर, कप्तान राव बलवीर सिंह जी ओ. बी. ई. रामपुरा ५१)
७. श्रीमान् धाय भाई गनेशीलाल जी आरमी मिनिस्टर अलवर राज्य ५१)
८. राव श्रीराम रईस नांगल २५)
९. म० शोभाराम जी डूंगरवास २५)
१०. चौ० धर्मसिंह जी मलिक, तहसीलदार रेवाड़ी २५)
११. राव निहालसिंह जी सूबेदार पान्हावास २५)
१२. बा० स्वयम्बरदास जी बी० ए० इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स पटना । २५)
१३. श्रीमती रानी निहालकोर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलवीरसिंह जी २५)
१४. सेठ बनवारी लाल जी लोहिया, चावड़ी बाज़ार दिल्ली । २५)
१५. चौ० नेतराम साहब गिरदावर हलका जाटूसाना जिला गुड़गाँवा । २५)
१६. वख्शी चाननशाह एम. ए., एल. एल. बी. इन्कम्टैक्स आफीसर जालंधर । २५)
१७. पं० मुखचन्द जी शर्मा (डहीना निवासी) अकाउण्टैन्ट हेड आफिस जयपुर २५)
१८. ला० नूनकरणदास जी अग्रवाल भिवानी । २५)
१९. राजा रूपसिंह जी रईस जिहाजगढ । २५)
२०. पं० गोपीनाथ जी [बिहाली निवासी] मालिक फार्म
काशीनाथ बच्चूमल गली परांठा दिल्ली २५)

सहायक ।

चौ० हुकमसिंह जी निखरी ११)
१. महाशय शादीराम जी मस्तापुर, रेवाड़ी । ५)
२. बा० अनन्तलाल जी शिरस्तेदार प्राईवेट सेक्रेटरी आफिस संगरूर, जींद । ५)

३. राव बलवन्तसिंह जी मु० जैतपुर तहसील रेवाड़ी । ५)
४. श्रीमती सूरज देवी धर्म पत्नी चौ० ज़ोरावरसिंह जी शिक्षन जज अलीगढ़। ५)
५. चौ० शिवनारायणसिंह जी कोतवाल, सीकर राजपूताना ५)
६. श्रीमान् पं० जयराम जी शर्मा 'सनातन' इलाहाबाद बैंक देहली । ५)
७. ला० बनारसी दास जी, अकाउण्टेण्ट हजूरी, संगरूर । ५)
८. ला० भगवान दास जी, असिस्टेंट क्लर्क सैक्रेटरी इजलास खास आफिस संगरूर ५)
९. महन्त प्रकाशानन्द जी मन्दिर बरणदा सपान बल्लीमारान दिल्ली ५)
१०. मि० एल. के. मिसरा इंस्पेक्टर, पोस्ट आफिस जयपुर ५)

पढ़ने योग्य पुस्तकें ।

१. भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहित मूल्य ॥=)
२. सारसंग्रह मूल्य ≡)
३. शब्द संग्रह मूल्य -)॥
४. भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त मूल्य ।-)
५. अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला मूल्य -)।
६. वेदोपनिषत् मूल्य ।-)
७. ज्ञानधर्मोपदेश मूल्य -)॥।
८. भाषा कक्षिका प्रकाश मूल्य ॥)

मिलने का पताः-

श्री भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी ।

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।